मंटो अब तक-1

एक प्रेम कहानी

सआदत हसन मंटो

संपादन

मुशर्रफ़ आलम ज़ौक़ी

एक प्रेम कहानी

मन्टो अब तक - 1

एक प्रेम कहानी

सआदत हसन मन्टो

अनुवाद व संपादन
मुशर्रफ आलम ज़ौक़ी

वाणी प्रकाशन
21-ए, दरियागंज, नयी दिल्ली-110002
फोन : 011-23273167, 23275710
फैक्स : 011-23275710
e-mail : vaniprakashan@gmail.com
website : www.vaniprakashan.com

वाणी प्रकाान का 'लोगो'
विख्यात चित्रकार मक़बूल फ़िदा हुसेन की
कूची से

सर्वाधिकार सुरक्षित

प्रकाशक की लिखित अनुमति के बिना इस पुस्तक को पूरी तरह अथवा आंशिक तौर पर या पुस्तक के किसी भी अंश को फ़ोटोकॉपी, रिकॉर्डिंग अथवा इलेक्ट्रॉनिक अथवा ज्ञान के किसी भी माध्यम से संग्रह व पुनर्प्रयोग की किसी भी प्रणाली द्वारा इस पुस्तक का कोई भी अंश प्रेषित, प्रस्तुत अथवा पुनरुत्पादित ना किया जाये।

ISBN : 978-81-8143-782-2

वाणी प्रकाशन
21-ए, दरियागंज, नयी दिल्ली-110002
द्वारा प्रकाशित
प्रथम संस्करण : 2008
© लेखकाधीन
आवरण : वाणी चित्रांकन
नागरी प्रिंटर्स, शाहदरा, दिल्ली-110032
द्वारा मुद्रित

मूल्य : 195.00

EK PREM KAHANI
by : Saadat Hasan Manto

आदरणीय भाई
गिरिराज किशोर को
कि मेरी तरह
वो भी मन्टो के भक्त हैं

अनुक्रम

दो शब्द	7
एक प्रेम कहानी	14
मंज़ूर	21
मिस एडना जैक्सन	29
फ़रिश्ता	36
सौदा बेचने वाली	45
बदसूरती	52
टोबा टेक सिंह	57
दौदा पहलवान	65
मिस माला	73
मिस्टर मोईनुद्दीन	80
फुंदने	88

दो शब्द

मन्टो पर बातें करते हुए अचानक देवेन्द्र सत्यार्थी की याद आ जाती है। मन्टो का मूल्यांकन करना हो तो मन्टो और मन्टो पर लिखे गये दुनियाभर के लेख एक तरफ मगर सत्यार्थी मन्टो पर जो 'दो लाइन' लिख गये, उसकी नज़ीर मिलनी मुश्किल है। 'मन्टो मरने के बाद ख़ुदा के दरबार में पहुंचा तो बोला, तुमने मुझे क्या दिया--- बयालिस साल। कुछ महीने, कुछ दिन। मैने तो सौगंधी को सदियां दी हैं।'

पाठक जानते होंगे 'सौगंधी' मन्टो की मशहूर कहानी है। लेकिन एक सौगंधी ही क्या मंटो की कहानियां पढ़िये तो जैसे हर कहानी 'सौगंधी' और उससे आगे की कहानी लगती है। शायद इसीलिए मुहम्मद हसन अस्करी ने मंटो को आज़ाद पाकिस्तान का हीरो अफ़साना निगार ठहराया देखते ही देखते हिन्दुस्तान में जन्मा मंटो पाकिस्तान का मंटो बन गया। बात भारत या पाकिस्तान की नहीं मंटो की है जो अपने साहित्यिक क़द में इतना बड़ा है कि पाकिस्तान से लाख मुहब्बत करने के बाद भी हम मंटो पाकिस्तान को नहीं दे सकते। मंटो की कहानियां दरअसल कुदरत की बनाई गई हर मख़लूक़ या प्राणी की कहानी है। नए-नए चरित्र गढ़ने में मंटो ने शायद तमाम विदेशी लेखकों को भी पीछे छोड़ दिया। आप जिस किसी भी विदेशी साहित्यकार की बात कीजिये, लेकिन मेरा यह दावा है इतने चरित्र तो बालज़ाक़ के यहां भी नहीं मिलेंगे। शायद खुदा की निर्माण की गई दुनिया में कोई भी चरित्र ऐसा नहीं होगा जिसे मंटो ने अपनी कहानी में न पेश किया हो। इसलिए मंटो सिर्फ बड़ा नहीं था बहुत बड़ा था, खुदा नहीं था मगर साहित्य में उसकी हैसियत किसी ख़ुदा जैसी थी। जिसकी दृष्टि से

कोई सा भी चरित्र बच नहीं पाता था। फ़साद मंटो की कहानी में केन्द्रीय भूमिका अदा करता है। जी चाहता है कि मुहम्मद हसन अस्करी की ये चन्द लाइनें आपको भी सुनवाई जाएं।

'' ... मंटो के अफ़साने सच्ची साहित्यिक रचनाएं हैं। इसलिए ये अफ़साने हमें व्यवहारिक तौर पर भी चौंकाते हैं। हालांकि मंटो का बुनियादी मक़सद यह नहीं था, बल्कि केवल रचना, विशेष स्थिति में अगर कोई चीज़ हमें चौंका सकती है तो घटनाएं या काम नहीं, बल्कि मामूली और दिनचर्या की सी बातें। अगर कोई दो सौ बच्चों और औरतों को क़त्ल करने के बाद उनकी खोपड़ियों का हार गले में पहन लेता है तो ये कोई असाधारण बात नहीं।''

जब क़त्ल एक आम मशग़ला बन चुका हो तो इसमें कोई डर की बात भी नहीं रह जाती। लेकिन जब हम देखते हैं कि क़ातिलों को यह फिक्र हो रही है कि खून से रेल का डब्बा गन्दा हो जायेगा तो हम ज़रूर एक तरह की बेचैनी महसूस करते हैं। क़ातिलों का क़त्ल किए चले जाना आतंक की बात नहीं है, आतंक तो इस विचार से होता है कि जिन लोगों में सफाई और गंदगी की तमीज़ बाक़ी है वो भी क़त्ल कर सकते हैं। असाधारण स्थिति में असाधारण हरकतें हमें इंसान के सम्बंध में ज़्यादा से ज़्यादा बता सकती हैं कि स्थितियां इंसान को हैवान की सतह पर ले आती हैं। लेकिन असाधारण हरकतें करते हुए साधारण बातों की ओर ध्यान, हमें इंसान के सम्बंध में एक ज़्यादा गहरी और ज़्यादा बुनियादी बात बताती है। वो यह कि इंसान प्रति क्षण और यथा समय इंसान भी होता है और हैवान भी। इसमें ख़ौफ का पहलू यह है कि इंसानियत के एहसास के बावजूद इंसान हैवान बनना कैसे गवारा कर लेता है। और सांत्वना का पहलू यह है कि वहशी से वहशी बन जाने के बाद भी इंसान अपनी इंसानियत से पीछा नहीं छुड़ा सकता। मंटो के इन अफसानों में ये दोनों पहलू मौजूद हैं... ख़ौफ़ भी और दिलासा भी। यहां तक कि उसकी दूसरी कहानियों के अतिरिक्त 'सुर्ख़ हाशिये' में इंसान अपनी बुनियादी मजबूरियों, हिमाक़तों, नर्मियों और पवित्रताओं सहित नज़र आता है। मंटो के क़हक़हे में बड़ा ज़हर है। मगर यह क़हक़हा हमें तसल्ली भी दिलाता है। असाधारण स्थिति में यह कहना कि इंसान की साधारण दिलचस्पियां और साधारण अभिरूचियां किसी के दबाये नहीं दब सकते, बड़ी बात है। मंटो ने इंसान को न अत्याचारी बताया है और न अत्याचार सहन करने वाला। बल्कि बस इतना संकेत करके चुप

हो गया है कि इंसान में बहुत सी बातें बिल्कुल बेजोड़ हैं। इस विचार से मायूसी भी बहुत पैदा होती है, मगर एक तरह से देखिए तो इंसानी फ़ितरत का बेमेल बेजोड़पन ही वास्तविक इंसान होने की बुनियाद बन सकता है। अगर इंसान केवल एक तरह का केवल नेक या केवल बद होता तो बड़ी ख़तरनाक चीज़ होता। इंसान की ओर से यदि कुछ उमीद बंधती है तो केवल इस कारण से कि इंसान कुछ ठीक नहीं। अच्छा भी कह सकता है और बुरा भी हो सकता है। दूसरे यह कि इंसान अपनी इंसानियत के दायरे में बंधा है। न तो फ़रिश्ता बन सकता है न शैतान। वो कितना ही असाधारण क्यों न बनना चाहे, साधाराण जीवन के तक़ाजे उसे फिर अपनी सीमाओं में घसीट लाते हैं। रोज़ाना का साधारण जीवन ऐसी शक्तिदायक वस्तु है कि इंसान अगर बहुत अच्छा नहीं बन सकता तो बहुत बुरा भी नहीं बन सकता। साधारण जीवन उसे ठोंक-पीट के सीधा कर ही लेता है।

मंटो के साथ के अफ़साना निगार हिन्दुओं और मुसलमानों को शर्म दिला-दिला कर उन्हें सही मार्ग पर लाना चाहते हैं, लेकिन उनके अफ़साने ख़त्म करने के बाद हम विश्वास से नहीं कह सकते कि उनका विरोध ठीक भी होगा या नहीं। मंटो न तो किसी को शर्म दिलाता है न किसी को सही मार्ग पर लाना चाहता है, वो तो बड़ी व्यंग्यत्मक मुस्कुराहट के साथ इंसानों से यह कहता है कि तुम अगर चाहो भी तो भटक के बहुत ज़्यादा दूर नहीं जा सकते। इस तरह मंटो को इंसानी फ़ितरत पर कहीं ज़्यादा भरोसा नज़र आता है। दूसरे लोग इंसान को एक ख़ास रंग में देखना चाहते हैं। वो इंसान को क़बूल करने से पहले कुछ शर्तें लागू करते हैं, मंटो को इंसान अपने असल रूप ही में क़बूल है, चाहे वो कैसा भी हो। वो देख चुका है कि इंसान की इंसानियत ऐसी सख़्त जान है कि उसकी बर्बरता भी इस इंसानियत को ख़त्म नहीं कर सकती, मंटो को उसी इंसानियत पर भरोसा है।

दंगों से सम्बन्धित जितने भी अफ़साने लिखे गये हैं। इन में मंटो के ये छोटे-छोटे 'हाशिये' सब से ज़्यादा भयंकर और सब से ज़्यादा आशापूर्ण हैं। मंटो का भय और मंटो की आशाएं राजनीतिक लोगों या इंसानियत के नेक दिल सेवकों की दहशत और 'रजाइयत' नहीं हैं, बल्कि एक फ़नकार की दहशत और उम्मीद से भरे नज़रिये पर आधारित है। इसका सम्बंध बहस या विचार से नहीं बल्कि ठोस रचनात्मक तजुर्बे से है। यही मंटो के इन अफ़सानों की एक मात्र विशेषता है।''

सच्ची बात यह है कि यही मंटो को असल चेहरा है। अस्करी के, इस तूल-तमहीद की ज़रूरत इसलिए पड़ी कि बड़े अफ़साना निगार मंटो के भीतर छुपे बेहद मामूली इंसान को दिखाया जा सके। मंटो फरिश्ता नहीं, इंसान है। इसलिए उसके चरित्र गुनाह करते हैं। दंगे करते हैं। न उसे किसी चरित्र से प्यार है न हमदर्दी। मन्टो न पैग़म्बर है न उपदेशक। उसका जन्म ही कहानी कहने के लिए ही हुआ था। इसलिए फ़साद की बेरहम कहानियां लिखते हुए भी उस का क़लम पूरी तरह क़ाबू में रहा। मंटो की खूबी यह थी कि वो चुटकी बजाते एक कहानी लिख लेता था। और वो भी इस हुनरमंदी के साथ कि चुटकी बजाते लिखी जाने वाली कहानियां भी आज उर्दू-हिन्दी अफ़साने का एक महत्वपूर्ण हिस्सा बन चुकी हैं।

कहानियों के अलावा मंटो के ड्रामे और 'ख़ाकों' की एक बहुत बड़ी दुनिया आबाद है। मुहम्मद अली जिन्नाह से सुरैया और अशोक कुमार तक जो ख़ाके मंटो ने लिखे, वो आज भी हमारे लिए संगमील का दर्जा रखते हैं। मन्टो को गुर्बत खा गई। शराब खा गई। विभाजन खा गया या पाकिस्तान खा गया। टोबाटेक सिंह जैसी कहानी लिखने वाला अदीब जम्हूरी-ये-इस्लाम पाकिस्तान से मुहब्बत कर ही नहीं सकता था। इसीलिए क़यामे-पाकिस्तान के कुछ ही दिन बाद ऐन जवानी में ही मन्टो इस दुनिया से रूख़सत हो गया। लेकिन शराबें पी कर, कहानियां पैसों के लिए लिख कर, या बटवारे के ज़हनी अज़ाब से दोचार होकर जो कुछ भी लिख गया, वह आज हमारे लिए सबसे बड़ा असासा है। और हक़ीक़त यह है कि मन्टो मरा ही नहीं क्योंकि न 'मोज़ैल' मर सकी। न 'सौगंधी'। ना 'टोबा टेक सिंह' मर सका और न ही 'ठंडा गोश्त'। या 'बू' या 'काली शलवार' जैसी कहानियां भीड़ में गुम हो सकीं। हुआ तो और उल्टा। समय गुजरने के साथ-साथ इन कहानियों की मांग और मक़बूलियत भी बढ़ने लगी। और ऐसी बढ़ने लगी कि यह कहा जाने लगा, 'आने वाला समय अपना मन्टो खुद दरियाफ़्त करेगा।'

मन्टो साहित्यकार था, बड़ा साहित्यकार। मगर था एक नम्बर का हिन्दुस्तानी। इसीलिए कुछ वर्ष पूर्व जब साहित्य अकादमी ने पाकिस्तानी कहानियों के चयन में मन्टो को पाकिस्तानी घोषित किया तो मुझ से बर्दाश्त न हो सका। और मैने खुल कर अपनी बात पाकिस्तानी पाठकों के सामने भी रखी।

'उर्दू अफ़साना ज़ब सपाट 'बयानिया' के दौर में सांस ले रहा था, मंटो

के रूप में गुलामी और साम्प्रदायिकता के 'अग्निगर्भ' से एक ऐसे फ़नकार ने जन्म लिया, जिसकी टेढ़ी-मेढ़ी काफ़िर कहानियां, उर्दू कहानियों का एक न भूलने वाला इतिहास बन गई। वही मंटो जिसने भारत में जन्म लिया। भारत में धक्के खाए। मुम्बई तब के 'बाम्बे' के फिल्मी स्टूडियोज़ में नौकरी की और जिसका 'आयरन मैन' टोबा टेक सिंह, 'नोमेसलैंड' के उस तरफ़ जाने में चिंतित था, क्या मंटो आन की आन में पाकिस्तानी बन गया?

साहित्य अकादमी द्वारा प्रकाशित संकलन पाकिस्तानी कहानियां (चमन और भूमिका : इंतेज़ार हुसैन, आसिफ़ फ़र्रूख़ी, अनुवादक: अब्दुल बिस्मिल्ला) सब से पहला बुनियादी सवाल तो यही खड़ा करता है कि पाकिस्तान बन जाने और अंतिम दिनों में पाकिस्तान चले जाने भर से क्या मंटो पाकिस्तानी हो गया। क्योंकि संकलन की 32 कहानियों में से पहली कहानी 'खोल दो' मंटो के 'पाकिस्तानी' करार दिये जाने की जो 'रूदाद' सुनाती है, वो हमें क़बूल नहीं।

साहित्य अकादमी से आगे ये सवाल भी पूछा जाए कि ऐसे महत्वपूर्ण और नादिर इंतिख़ाब में अनुवादक की भूमिका महज़ एक चौकीदार की क्यों? और वो भी तब जब अनुवादक उर्दू और हिन्दी दोनों साहित्य का एक जाना माना नाम है-- अब्दुल बिस्मिल्लाह। समीक्षा के दौरान आने वाले बहुत से प्रश्नों का उत्तर बिस्मिल्लाह दे सकते थे। लेकिन तब, जब एक चौकीदार से आज तक के उनके साहित्यिक विज़न को आंका जाता। जैसे एक सवाल तो आम तरीक़े से चयनकर्ताओं यानी आसिफ़ फ़र्रूख़ी और इंतेज़ार भाई से पूछा ही जा सकती है कि भाई, इस इंतिख़ाब का आधार क्या रहा। और 32 कहानीकारों के चयन में एक ओर जहां आपने मंटो को पाकिस्तानी बना दिया, वहां कई बेहद अहम नाम छोड़ क्यों दिए।

भूमिका के तहत अपने इंतेज़ार भाई ने कई बहुत ही दिलचस्प बातें अपने पाठकों के सामने रखी हैं। मसलन:

''पाकिस्तान बनने के थोड़े अर्से बाद ही हमारे साहित्य में यह सवाल खड़ा हो गया कि पाकिस्तानी साहित्य की अपनी पहचान क्या है?''

मुम्किन है, मंटो वाली ग़लतफहमी भी इसी पाकिस्तानी साहित्य की पहचान से जन्मी हो। क्योंकि पहचान की यह बड़ी त्रासदी थी, जिसका शिकार स्वयं मंटो का चरित्र 'टोबा टेक सिंह' हुआ था। पागल कहे जाने वाले टोबा टेक सिंह की चिन्ता भी यही थी हिन्दुस्तान कौन? और पाकिस्तान कौन? शायद यही चिन्ता मंटो की भी रही हो। नतीजे के तौर पर

टोबाटेक सिंह ने जिस जगह अपने प्राण त्यागे, वो जगह न हिन्दुस्तान की थी, न पाकिस्तान की, वो नोमेंसलैण्ड थी। मंटो का अन्तिम समय में चला जाना दूर्भाग्यपूर्ण हो सकता है, परंतु यही मंटो था, जो जीवन भर बटवारे के विरोध में लिखता रहा।

पाकिस्तानी साहित्य की पहचान का मामला दिलचस्प है। ठीक वैसे ही जैसे मंटो का चरित्र टोबा टेक सिंह। विभाजन के पहले तक तो सारे भारतीय थे। फिर पाकिस्तानी साहित्य का भेद कैसे बर्ता जाए।

इंतेज़ार भाई आगे लिखते हैं:

''एक तक़ाज़ा यह भी था, जब एक मुल्क बन गया है और हम एक अलग क़ौम की हैसियत रखते हैं तो हमारे साहित्य को भी ऐसा होना चाहिए कि इसकी अलग शिनाख़्त हो।''

लेकिन यहीं पर इंतेज़ार भाई मार खा गए। विभाजन की अपनी त्रासदी थी। दो क़ौमी नज़रिये की बात छोड़ दीजिए तो 54 बरसों बाद भी आप इस शिनाख़्त की विभाजन रेखा नहीं खींच सकते। विचारधाराओं की सतह पर भी साहित्य का विभाजन नहीं हो सका।

लेकिन एक दिलचस्प बात का जानना ज़रूरी है कि पाकिस्तानी बनने के बाद से ही 'अलेहदा पाकिस्तानी साहित्य' की मांग ने भी सर उठाना शुरू किया था। आसिफ़ फ़र्रूखी के नाना यानी हसन अस्करी ने सबसे पहले इस अलग पाकिस्तानी साहित्य की वकालत की और 'मंटो' जैसे जनवादी लेखक को 'नए इस्लामी गणतंत्र' की नई भूमिका को देखते हुए पाकिस्तानी घोषित कर दिया। मंटो बेचारा जो विभाजन की त्रासदी से गुज़रने के बाद सन् 48, में पाकिस्तान गया। वह भी अपनी पत्नी के ज़ोर देने पर। और 55 में मंटो की मृत्यु भी हो गई। मगर अस्करी उसे हर सतह पर पाकिस्तानी घोषित करने में लगे रहे। एक समय में पंचतन्त्र की कहानियां रचने वाले इंतेज़ार भाई भी पाकिस्तान और इस्लामी विचारधारा से गुज़रते साहित्य की मांग लेकर सामने आए थे। शायद इसीलिए पाकिस्तानी कहानी को एक दम अलग आंखों से देखने की कार्रवाई ज़ोर पकड़ चुकी थी।

'पाकिस्तानी अगर अलग क़ौम है' तो इसकी क़ौमी और तहज़ीबी शिनाख्त क्या है? इसका इतिहास कहां से शुरू होता है और इसकी जड़ें कहां हैं?''

हम यह स्पष्ट कर देना चाहते हैं कि भारत से निकले पाकिस्तान की तहज़ीबी शिनाख़्त की जड़ें हमेशा से भारत में गड़ी थीं। और गड़ी हैं। उनका

इतिहास भी भारत से शुरू होता है। शायद इसीलिए अलग क़ौमी और तहज़ीबी शिनाख़्त ढूंढने की कार्रवाई उन्हें बार-बार जख़्मी करती रही है। राजनीति के अखाड़े से साहित्य के रंगमंच तक यह भटकाव इसी कंफ्यूज़न की देन है। ये सब लिखने का कारण केवल इतना भर था कि आप मंटो पर जो केवल 'अंत के दिनों के सात साल तक' पाकिस्तान रहा, आप पाकिस्तानी होने की मुहर नहीं लगा सकते।''

इसलिए मन्टो का पाकिस्तान जाना हमें उतना आहत नहीं करता, जितना उसका पाकिस्तानी समझा जाना। मजबूरियों ने उसे हिजरत के लिए ज़रूर मजबूर किया लेकिन मंटो की आत्मा भारत में ही रही। इसलिए मन्टो कल भी हमारा था। मन्टो आज भी हमारा है।

मन्टो की कहानी का अस्ल हुस्न शब्दों में है, इसलिए कोशिश की गई कि अनुवाद ऐसा हो कि मन्टो का असली रंग फीका न पड़े।

मन्टो अब तक सीरीज़ के लिए यह सदी के सबसे बड़े अफ़सानिगार को हमारी विनम्र श्रद्धांजलि है। 'एक प्रेम कहानी' का अनुवाद नबी अहमद ने किया है। इससे पहले भी वो मेरी संपादित कई पुस्तकों में अनुवादक की हैसियत से शामिल रहे हैं। वो उर्दू में कहानियां भी लिखते हैं और उनका एक कहानी-संग्रह ''कैम्प में बच्चा'' (उर्दू) भी प्रकाशित हो चुका है। कम्पोज़िंग के तौर पर उर्दू, फार्सी और अरबी के माहिर समीउल्लाह क़न्नौजी की सहायता हासिल की गई है। पुस्तक के आयोजन के लिए मैं इन दोनों का आभार वयक्त करता हूं।

आपकी राय हमारे लिए क़ीमती है। मन्टो के बारे में कोई नई बात या सुझाव हमें देना चाहें, तो उसका स्वागत किया जायेगा।

मुशर्रफ़ आलम ज़ौक़ी

एक प्रेम कहानी

मुझ से सम्बंधित आम लोगों को यह शिकायत है कि मैं प्रेम कहानी नहीं लिखता। मेरे अफ़सानों में चूंकि इश्क़-मुहब्बत की चाशनी नहीं होती इसलिए वो बिल्कुल सपाट होते हैं। मैं अब यह प्रेम कहानी लिख रहा हूं ताकि लोगों की यह शिकायत किसी हद तक दूर हो जाए।

जमील का नाम अगर आपने पहले नहीं सुना तो अब सुन लीजिये। उसका परिचय मुख़्तसर तौर पर कराये देता हूं। वो मेरा लंगोटिया दोस्त था हम इकट्ठे स्कूल में पढ़े, फिर कालेज में एक साथ दाखिल हुए। मैं एफ ए में फेल हो गया और वो पास। मैने पढ़ाई छोड़ दी मगर उसने जारी रखी। डबल एम०ए० किया और पता नहीं कहां ग़ायब हो गया। सिर्फ इतना सुनने में आया था कि उसने एक पांच बच्चों वाली मां से शादी कर ली थी और बाहर चला गया था। वहां से वापस आया या कहां रहा, इस सम्बंध में मुझे कुछ मालूम नहीं।

जमील बड़ा आशिक़ मिज़ाज था। स्कूल के दिनों ही में उसका मन बेक़रार रहता था वो किसी लड़की की मुहब्बत में गिरफ्तार हो जाए। मुझे ऐसी गिरफ्तारी से कोई खास दिलचस्पी नहीं थी। लेकिन उसकी सरगर्मियों में जो इश्क़ से जुड़ी होतीं, बराबर हिस्सा लिया करता था।

जमील लम्बे क़द का नहीं था मगर अच्छे ख़दो-ख़ाल का मालिक था। मेरा मतलब है उसे ख़ूबसूरत न कहा जाए तो उसके क़बूल सूरत होने में शको-शुबह नहीं था। रंग गोरा और सुर्ख़ी माइल, तेज़-तेज़ बातें करने वाला, बला का ज़हीन, मनो विज्ञान का छात्र, बड़ा सेहतमन्द।

उसके दिलो-दिमाग़ में जवानी तक पहुंचने से कुछ अर्सा पहले ही प्रेम

करने की ज़बरदस्त ख़्वाहिश पैदा हो गई थी। उसको ग़ालिब के इस 'शेर' का अर्थ अच्छी तरह मालूम था,

इश्क़ पर ज़ोर नहीं है ये वो आतिश ग़ालिब
कि लगाये न लगे और बुझाये न बुझे

मगर इसके विपरीत वो ये आग खुद अपनी माचिस से लगाना चाहता था।

उसने इस कोशिश में कई माचिस जलाईं। मेरा मतलब यह है कि कई लड़कियों के इश्क़ में गिरफ्तार हो जाने के लिए नए-नए सूट सिलवाए, बढ़िया से बढ़िया टाइयां खरीदीं, सेंट की सैंकड़ों शीशियां इस्तेमाल कीं मगर यह सूट, टाइयां और सेंट इसकी कोई मदद न कर सके।

मैं और वो, दोनों शाम को कम्पनी बाग़ का रूख करते। वो ख़ूब सजा बना होता। उसके कपड़ों से बेहतरीन ख़ुश्बू निकल रही होती। बाग़ की रविशों पर कई लड़कियां बदसूरत, ख़ूबसूरत, क़बूल सूरत 'महवे ख़िराम' होती थीं। वो उनमें से किसी एक को अपने इश्क़ के लिए चुनाव करने की कोशिश करता मगर नाकाम रहता।

एक दिन उसने मुझ से कहा : 'सआदत मैने आख़िरकार एक लड़की चुन ही ली है। ख़ुदा की क़सम, चन्दे आफ़्ताब, चन्दे माहताब है। मैं कल सुबह सैर के लिए निकला। बहुत सी लड़कियां भाई के साथ स्कूल जा रही थीं। उनमें एक बुर्क़ापोश लड़की ने जो अपनी नक़ाब हटाई तो उसका चेहरा देख कर मेरी आंखें उस पर टिकी रह गईं। क्या हुस्नो-जमाल था! बस मैने वहीं फैसला कर लिया कि जमील अब ज़्यादा न भागो, उस हसीना के इश्क में तुम्हें गिरफ्तार होना चाहिए। होना क्या तुम हो चुके हो।'

उसने फैसला कर लिया कि वो रोज़ सुबह उठ कर उस मुक़ाम पर जहां उसने काफिर- जमाल हसीना को देखा था, पहुंच जाया करेगा और उसको अपनी तरफ ध्यान दिलाने की कोशिश करेगा।

इसके लिए उसके ज़हीन दिमाग़ ने बहुत से प्लान सोचे थे। एक जो दूसरे के मुक़ाबले में ज़्यादा प्रभावशाली था, उसने मुझे बता दिया था।

उसने हिसाब लगाकर सोचा था कि दस दिन लगातार उस लड़की को एक ही मुक़ाम पर खड़े रह कर देखने और घूरने से इतना मालूम हो जाएगा कि इसका मतलब क्या है? यानी वो क्या चाहता है। इस मुद्दत के बाद वो इसकी प्रतिक्रिया देखेगा और विचार करने के बाद कोई फैसला लेगा।

यह डर था कि वो लड़की उसका देखना या घूरना पसन्द न करे। भाई

से या अपने पैरेंट्स से उसके इस रवैये की शिकायत कर दे। यह भी मुम्किन था कि वो राज़ी हो जाती। उसकी साबित क़दमी उस पर इतना असर करती कि उसके साथ भाग जाने को तैयार हो जाती।

जमील ने तमाम पहलुओं पर अच्छी तरह विचार कर लिया था। शायद ज़रूरत से ज़्यादा। इसलिये कि दूसरे रोज़ जब वो अलार्म बजने पर उठा तो उसने उस मुक़ाम पर जहां उस लड़की से उसकी पहली बार मुठभेड़ हुई थी, जाने का ख़्याल तर्क कर दिया।

उसने मुझ से कहा: सआदत मैने सोचा कि हो सकता है स्कूल में छुट्टी हो क्योंकि जुमा है। मालूम नहीं इस्लामी स्कूल में पढ़ती है या किसी गवर्नमेंट स्कूल में। फिर यह भी मुम्किन था कि अगर मैं उसे ज़्यादा शिद्दत से घूरता तो वो भिन्ना जाती। इसके इलावा इस बात की क्या ज़मानत थी कि दस दिन के अन्दर-अन्दर मुझे उसकी प्रतिक्रिया अच्छी तरह से मालूम हो जाएगी। शायद वो रज़मन्द हो जाती, मेरा मतलब है मुझे आसानी से गुफ्तुगू का मौक़ा दे देती, तो मैं उस से क्या कहता।''

मैने कहा : ''यही कि तुम उससे मुहब्बत करते हो।''

जमील संजीदा हो गया। ''यार, मुझ से कभी कहा न जाता-- तुम सोचो न अगर यह सुन कर वो मेरे मुंह पर यह पत्थर दे मारती कि जनाब आपको इसका क्या हक़ हासिल है, तो मैं क्या जवाब देता। ज़्यादा से ज़्यादा मैं यह कह सकता कि हुज़ूर मुहब्बत करने का हक़ हर इंसान को हासिल है। मगर वो एक और पत्थर मुझे मार सकती थी कि तुम बकवास करते हो, कौन कहता है कि तुम इंसान हो।''

क़िस्सा मुख़्तसर यह कि जमील उस हसीनो-जमील लड़की की मुहब्बत में ख़ुद को अपने स्वाभिमान के कारण गिरफ्तार न करा सका। मगर उसकी ख़्वाहिश बदस्तूर मौजूद थी। एक और सुन्दर चेहरे वाली लड़की उसकी मुंतज़र निगाहों के सामने आई और उसने फौरन तहैय्या कर लिया कि उस से इश्क़ लड़ाना शुरू कर देगा।

जमील ने सोचा कि उस से खतो-किताबत की जाए, इसलिए उसने पहले ख़त के कई टुकड़े फाड़ने के बाद एक आख़री, इश्को-मुहब्बत में शराबोर, तहरीर मुकम्मल की, जो मैं यहां नक़ल करता हूं।

जाने-जमील!

अपने दिल की धड़कनें सलाम के तौर पर पेश करता हूं। हैरान न हो

जाइयेगा कि यह कौन है जो आपसे यों बेधड़क हमकलाम है। मैं अर्ज़ किए देता हूं। कल शाम को सवा छः बजे– नहीं, छः बजकर ग्यारह मिनट पर जब आप अमृत सिनेमा के पास तांगे में से उतरीं तो मैने आपको देखा। बस एक ही नज़र में मुझ पर जादू कर दिया।

आप अपनी सहेलियों के साथ पिकचर देखने चली गईं और मैं बाहर खड़ा आपको अपनी कल्पना की आंखों से मुख़्तलिफ़ रूप में देखता रहा। दो घंटे के बाद आप बाहर निकलीं। फिर ज़ियारत नसीब हुई और मैं हमेशा-हमेशा के लिए आपका गुलाम हो गया।

मेरी समझ में नहीं आता मैं आपको और क्या लिखूं। बस इतना पूछना चाहता हूं, क्या आप मेरी मुहब्बत को अपने हुस्नो-जमाल की शायाने-शान समझेंगी या नहीं।

अगर आपने ठुकरा दिया तो मैं खुदकुशी नहीं करूंगा, ज़िन्दा रहूंगा ताकि आपके दीदार होते रहें।

आपके हुस्नो-जमाल का परिस्तार

जमील

यह ख़त उसने मेरे घर में एक ख़ुश्बूदार काग़ज़ पर अपनी रफ़ तहरीर से मुंतक़िल किया था। लिफाफा फूलदार और ख़ुश्बूदार था जिसको जमालियाती ज़ौक़ ने पसंद नहीं किया था।

चन्द रोज़ के बाद जमील मुझसे मिला तो मालूम हुआ कि उसने यह ख़त उस लड़की तक नहीं पहुंचाया।

पहली बात यह है कि इश्क़ का आग़ाज़ ख़त से करना अनुचित है।

दूसरी इसलिए कि इस ख़त की तहरीर ठीक नहीं है। उसने ख़ुद को लड़की तसव्वर कर के यह ख़त पढ़ा और उसको बहुत मज़हकाख़ीज़ मालूम हुआ।

तीसरी इसलिए कि तफ्तीश करने के बाद उसको मालूम हुआ कि लड़की हिन्दू है।

यह मामला भी शुरू होने से पहले ही ख़त्म हो गया।

उसके घर में मेरा आना जाना था। मुझ से कोई पर्दा वग़ैरह नहीं था। हम घंटों बैठे पढ़ाई या गपबाज़ियों में मशगूल रहते। उसकी दो बहनें थीं, छोटी-छोटी। उन से बड़ी बचकाना क़िस्म की पुर लुत्फ़ बातें होतीं। उसकी मौसी की एक आख़री दर्जे की सीधीसाधी लड़की अज़रा थी। उम्र यही कोई सतरह-अठारह बरस होगी। उसका हम दोनों बहुत मज़ाक़ उड़ाया करते थे।

जमील की जबदूसरी कोशिश भी नाकाम साबित हुई तो वो दो महीने तक ख़ामोश रहा। इस दौरान उसने इश्क़ में गिरफ्तार होने की कई नई कोशिश की। लेकिन उसके बाद उसको एकदम दौरा पड़ा और उसने एक हफ्ता के अन्दर-अन्दर पांच-छः लड़कियां अपनी इश्क़ की बंदूक़ के लिए निशाने के तौर पर चुन लिया। लेकिन नतीजा वही ढाक के तीन पात। सिर्फ चार लड़कियों के सम्बंध में, मुझे उसकी इश्क़िया मुहिम के बारे में इल्म है।

पहली ने जो उसकी दूर-दराज़ की रिश्तेदार थी, अपनी मां के ज़रीये उसकी मां तक यह अल्टीमेटम भेजवा दिया कि अगर जमील ने उसको फिर बुरी नज़रों से देखा तो उसके हक़ में अच्छा नहीं होगा।

दूसरी ग़ौर से देखने पर चेचक के दाग़ों वाली निकली।

तीसरी की छठे-सातवें रोज़ एक क़साई से मंगनी हो गई।

चौथी को उसने एक लम्बा इश्क़िया ख़त लिखा जो उसकी मौसी की बेटी अज़रा के हाथ आ गया। मालूम नहीं किस तरह। पहले जमील उसका मज़ाक़ उड़ाया करता था, अब उसने उड़ाना शुरू कर दिया। इतना कि जमील के नाक में दम आ गया।

जमील ने मुझे बतया: ''सआदत यह अज़रा जिसे हम बेक़ूफ़ी की हद तक सीधी-साधी समझते हैं, सख़्त ज़ालिम है। सब समझती है। जिस लड़की को मैने ख़त लिखा था और ग़लती से अपने मेज़ के दराज़ में रखकर यह सोचने में मशगूल था कि वो इसका क्या जवाब लिखेगी, यह कमबख़्त जाने कैसे ले उड़ी। अब उसने मेरा 'नातक़ा' बन्द कर दिया है। कभी-कभी ऐसी तल्ख़ बातें करती है कि मुझे रुलाती है और ख़ुद भी रोती है। में तो तंग आ गया हूं।''

उस से बहुत ज़्यादा तंग आकर उसने अपने इश्क़ की मुहिम और तेज़ कर दी। अब की उसने चौदह लड़कियां चुनीं मगर अच्छी तरह ग़ौर करने के बाद उनमें से सिर्फ एक बाक़ी रह गई। दस उसके मकान से बहुत दूर रहती थीं जिनको हर रोज़ देखने के लिए उसका दिल गवाही नहीं देता था। दो ऐसी थीं। जिनके ख़ानदानी होने के बारे में उसे शुबहा था। बारह हुईं। तेरहवीं ने एक दिन ऐसी बुरी तरह घूरा कि उसके होश ठिकाने लग गए।

चौदहवीं जो चौदहवीं का चांद थी, पट जाती मगर वो कमबख़्त कम्युनिस्ट थी। जमील ने सोचा था कि उसका प्रेम पाने के लिए वो ज़रूर कम्युनिस्ट बन जाता। खादी के कपड़े पहन कर मज़दूरों के हक़ में दस

बारह तक़रीरें भी कर देता। मगर मुसीबत यह थी कि उसके वालिद साहब रिटायर्ड इंजीनियर थे, उनकी पेंशन यक़ीनन बन्द हो जाती। यहां से नाउमीदी हुई तो उसने सोचा कि इश्क़ बाज़ी फ़ज़ूल है। शराफत यही है कि वो किसी से शादी कर ले। उसके बाद अगर तबीयत चाहे तो अपनी बीवी की मुहब्बत में गिरफ्तार हो जाए। चुनांचे उसने मुझे इस फैसले से आगाह किया। तय यह हुआ कि वो अपनी अम्मी जान और अपने अब्बा जान से बात करे।

बहुत दिनों की सोच विचार के बाद उसने इस गुफ़्तगू का ख़ाका तैयार किया। सब से पहले उसने अपनी अम्मी से बात की। वो ख़ुश हुईं। इध र-उधर अपने अज़ीज़ों में उन्होंने जमील के लिए मौज़ूं रिश्ता ढूंढने की कोशिश की मगर नाकामी हुई-- पड़ोस में ख़ान बहादुर की लड़की थी-- एम.ए.। बड़ी ज़हीन और तबीयत की बहुत अच्छी। मगर उसकी नाक चिपटी थी। ख़ाला की बेटी हुस्न आरा थी पर बेहद काली। सोग़रा थी मगर उसके मां-बाप बड़े ख़सीस थे। जहेज़ में जितने जोड़े। जमील की मां चाहती थी, उस से वो आधे भी देने पर रज़ामंद नहीं थे। अज़रा का तो कोई सवाल ही पैदा नहीं होता था।

जमील की मां ने बड़ी कोशिशों के बाद रावलपिंडी के एक अच्छे और ख़ुशहाल ख़ानदान की लड़की से बातचीत तय कर ली। जमील अपनी नाकाम इश्क़बाज़ियों से इतना तंग आ गया था कि उसने अपनी मां से यह भी न पूछा कि शक्ल सूरत कैसी है। वैसे उसने अपने ज़िन्दा तसव्वर में इसका अंदाज़ा लगा लिया था और मुफ़स्सल तौर पर सोच लिया था कि वो उसकी मुहब्बत में किस तरह गिरफ्तार होगा।

यह सिलसिला काफी देर तक जारी रहा। मैं ख़ुश था कि जमील की शादी हो रही है। उसके मर्ज़-ए-इश्क़ का एक फ़क़त यही इलाज था।

महीने गुज़र गए। आख़िर रावलपिंडी के इस प्रतिष्ठित और ख़ुशहाल घराने की लड़की से जिसका नाम शरीफ़ा था, उसकी मंगनी हो गई।

इस तक़रीब पर उसे ससुराल की तरफ से हीरे की अंगूठी मिली। जो वो हर वक़्त पहने रहता था। इस पर उसने एक नज़्म भी लिखी जिसका कोई शेर मुझे याद नहीं। एक बरस तक सोचता रहा कि उसे अपनी दुल्हन को कब अपने यहां लाना चाहिए। आदमी चूंकि आज़ाद और रौशन ख़्याल क़िस्म का था। इसलिए उसकी ख़्वाहिश थी कि मां बाप से अलग अपना घर बनाए। यह कैसा होना चाहिए, इसमें किस डिज़ाइन का फ़र्नीचर हो,

नौकर कितने हों, माहवार खर्च कितना होगा, सास के साथ उसका क्या सलूक होगा, इन तमाम बातों के बारे में उसने काफी सोच विचार किया। नतीजा यह हुआ कि लड़की वाले तंग आ गये। वो चाहते थे कि रूख़्सती का मरहला जल्द अज़ जल्द तय हो।

जमील इस बारे में कोई फैसला न कर सका। लेकिन उसकी अम्मी ने एक तारीख़ मुक़र्रर कर दी। कार्ड-वार्ड छप गए। वलीमे की दावत के लिए ज़रूरी सामान का बंदोबस्त कर लिया गया। उसके वालिद बुज़ुर्गवार शेख मुहम्मद इस्माईल साहब रिटायर्ड इंजीनीयर बहुत खुश थे। मगर जमील बहुत परेशान था। इसलिए कि वो अपने बनने वाले घर का आख़री नक़्शा तैयार नहीं कर सका था।

रूख़्सती की तारीख़ 9 अक्तूबर मुक़र्रर की गई थी। 8 अक्तूबर की शाम को बहुत देर तक-- मेरा ख़्याल है रात के दो बजे तक उस आने वाले हादसे के सम्बन्ध में बातचीत करते रहे। लेकिन किसी नतीजे पर न पहुंचे। आख़िर तय यह हुआ कि जो होता है, होने दिया जाए।

और हुआ यह कि 9 अक्तूबर की सुबह को... मुंह अंधेरे जमील मेरे पास सख़्त बेचैनी और पीड़ा के आलम में आया और उसने मुझे यह ख़बर सुनाई कि उसकी मौसी की लड़की अज़रा ने जो बेवकूफ़ी की हद तक सीधी साधी थी, ख़ुदकुशी कर ली है। इसलिए कि उसको जमील से बहुत प्रेम था। वो बर्दाश्त न कर सकी कि उसके 'महबूबो-माबूद' की शादी किसी और लड़की से हो। इस बारे में उसने जमील के नाम एक ख़त लिखा, जिसकी इबारत बहुत दर्दनाक थी। मेरा ख़्याल है कि यह तहरीर यादगार के तौर पर उसके पास सुरक्षित होगी।

मंज़ूर

जब उसे अस्पताल में दाख़िल किया गया तो उसकी हालत बहुत ख़राब थी। पहली रात उसे आक्सीजन पर रखा गया। जो नर्स ड्यूटी पर थी, उसका ख़्याल था कि यह नया मरीज़ सुबह से पहले-पहले मर जाएगा। उसकी नब्ज़ की रफ़्तार ठीक तरह से नहीं थी। ज़ोर-ज़ोर से फड़फड़ाती और कभी काफी देर के बाद चलती थी।

पसीने में उसका बदन शराबोर था। एक क्षण के लिए भी उसे चैन नहीं मिलता था। कभी इस करवट लेटता, कभी उस करवट। जब घबराहट बहुत ज़्यादा बढ़ जाती तो उठ कर बैठ जाता और लम्बी-लम्बी सांस लेने लगता। रंग उसका हल्दी की गांठ की तरह पीला था। आंखें अन्दर धंसी हुईं। 'नाक का बांसा बर्फ की डली।' सारे बदन पर रेशा था।

सारी रात उसने बड़ी पीड़ा में काटी। ऑक्सीजन बराबर दी जा रही थी। सुबह हुई तो उसे कुछ आराम महसूस हुआ और वो निढाल होकर सो गया।

उसके दो-तीन अज़ीज़ आए। कुछ देर बैठे रहे और चले गए। डाक्टरों ने उनहें बता दिया था कि मरीज़ को दिल का रोग है। यह बहुत ख़तरनाक होता है।

जब वो उठा तो उसे टीके लगा दिये गए। उसके दिल में बदस्तूर मीठा-मीठा दर्द हो रहा था। शानों के पुट्ठे अकड़े हुए थे। जैसे रात भर उनहें कोई कूटता रहा था। जिस्म की बोटी-बोटी दुख रही थी। मगर कमज़ोरी के कारण वो बहुत ज़्यादा तकलीफ़ महसूस नहीं कर रहा था। वैसे उसको यक़ीन था कि उसकी मौत दूर नहीं, आज नहीं तो कल ज़रूर मर

जायेगा।

उसकी उम्र बत्तीस बरस के क़रीब थी। इन बरसों में उसने कोई राहत न देखी थी जो इस समय उसे याद आती और उसकी तकलीफ में इज़ाफा करती। उसके मां-बाप उसको बचपन ही में गुज़र गये थे। मालूम नहीं उसकी परवरिश किस ख़ास शख़्स ने की थी। बस वो ऐसे ही इधर-उधर की ठोकरें खाता इस उम्र तक पहुंच गया था और एक कारख़ाना में मुलाज़िम हो कर पच्चीस रूपये माहवार पर बड़ी ग़रीबी की ज़िन्दगी गुज़ार रहा था।

दिल में टीसें न उठतीं तो वो अपनी तन्दुरूस्ती और बीमारी में कोई नुमायां फ़र्क़ महसूस न करता। क्योंकि सेहत उसकी कभी भी अच्छी नहीं थी। कोई न कोई रोग उसे ज़रूर उभरता रहता था।

शाम तक उसे चार टीके लग चुके थे। ऑक्सीजन हटा ली गई थी। दिल का दर्द कुछ कम था। इसलिए वो होश में था और अपने आसपास का जाइज़ा ले सकता था।

वो बहुत बड़े वार्ड में था जिसमें उसकी तरह और कई मरीज़ लोहे की चारपाइयों पर लेटे थे। नर्सें अपने काम में मशगूल थीं। इसके दाऐं हाथ नौ-दस बरस का लड़का कम्बल में लिपटा हुआ उसकी तरफ देख रहा था, उसका चेहरा तमतमा रहा था।

''अस्सलामोअलैकुम!'' लड़के ने बड़े प्यार से कहा।

नए मरीज़ ने उसके प्यार भरे लहजे से प्रभावित होकर जवाब दिया: ''वअलैकुम सलाम।''

लड़के ने कम्बल में करवट बदली। ''भाई जान! अब आपकी तबीयत कैसी है?''

नए मरीज़ ने धीरे से कहा : अल्लाह का शुक्र है।''

लड़के का चेहरा और ज़्यादा तमतमा उठा। ''आप बहुत जल्द ठीक हो जाएंगे। आपका नाम क्या है?''

''मेरा नाम!'' नए मरीज़ ने मुस्कुरा कर लड़के की तरफ बड़े प्यार से देखा।

''मेरा नाम अख़्तर है।''

''मेरा नाम मंज़ूर है।'' यह कह कर उसने एक दम करवट बदली और उस नर्स को पुकारा जो इधर से गुज़र रही थी। ''आपा-आपा जान।''

नर्स रूक गई। मंज़ूर ने माथे पर हाथ रख कर उसे सलाम किया। नर्स

क़रीब आई और उसे प्यार कर के चली गई।

थोड़ी देर बाद असिस्टेंट हाउस सर्जन आया। मंज़ूर ने उसको भी सलाम किया। "डॉक्टर जी, अस्सलामो अलैकुम।"

डॉक्टर सलाम का जवाब देकर उसके पास बैठ गया और देर तक उसका हाथ अपने हाथ में लेकर उस से बातें करता रहा जो हस्पताल के बारे में थीं।

मंज़ूर को अपने वार्ड के हर मरीज़ से दिलचस्पी थी। उसको मालूम था कि किसकी हालत अच्छी है और किसकी हालत ख़राब है। कौन आया है कौन गया है। सब नर्सें उसकी बहनें थीं और सब डॉक्टर उसके दोस्त। मरीज़ों में कोई चचा था, कोई मामूं और कोई भाई।

सब उस से प्यार करते थे। उसकी शक्लो-सूरत मामूली थी। मगर उसमें एक कशिश थी। हर वक़्त उसके चेहरे पर तमतमाहट खेलती रहती जो उसकी मासूमियत पर 'हाले' का काम देती थी। वो हर वक़्त खुश रहता था। बहुत ज़्यादा बातूनी था। मगर अखतर को, हालांकि वो दिल का मरीज़ था और इस मर्ज़ के कारण बहुत चिड़चिड़ा हो गया था, उसकी ये आदत खलती नहीं थी।

चूंकि उसका बिस्तर अख़्तर के बिस्तर के पास था इसलिए वो थोड़ी-थोड़ी देर के बाद उससे गुफ़्तुगू शुरू कर देता था जो छोटे-छोटे मासूम जुमलों पर होती थीं।

"भाई जान! आपके भाई बहन हैं?"

"मैं अपने मां-बाप का इक्लौता लड़का हूं।"

"आपके दिल में अब दर्द तो नहीं होता है।"

"मुझे मालूम नहीं दिल का दर्द कैसा होता है।"

"आप बिल्कुल ठीक हो जाएंगे... दूध ज़्यादा पिया करें।"

"मैं बड़े डाक्टर जी से कहूंगा, वो आपको मक्खन भी दिया करें।"

बड़ा डॉक्टर भी उस से बहुत प्यार करता था। सुबह जब राउंड पर आता तो कुर्सी मंगा कर उसके पास थोड़ी देर तक ज़रूर बैठता और उसके साथ इधर-उधर की बातें करता रहता।

उसका बाप दर्ज़ी था। दोपहर को पन्द्रह-बीस मिनट के लिए आता। सख़्त अफ़रा-तफरी के आलम में। उसके लिए फल वगैरह लाता और जल्दी- जल्दी उसे खिलाकर और उसके सर पर मुहब्बत का हाथ फेर कर चला जाता। शाम को उसकी मां आती और बुर्क़ा ओढ़े देर तक उसके पास

बैठी रहती।

अख़्तर ने उसी वक़्त उस से दिली रिश्ता क़ायम कर लिया था जब उसने उसको सलाम किया था। उस से बातें करने के बाद यह रिश्ता और भी मज़बूत हो गया। दूसरे दिन रात की ख़ामोशी में जब उसे सोचने का मौक़ा मिला तो उसने महसूस किया उसकी हालत में जो सुधार हुआ है, मंज़ूर ही का 'करिश्मा' है।

डॉक्टर जवाब दे चुके थे। वो सिर्फ़ चन्द घड़ियों का मेहमान था। मंज़ूर ने उसको बताया था कि जब उसे बिस्तर पर लिटाया गया था तो उसकी नब्ज़ करीब-क़रीब ग़ायब थी। उसने दिल ही दिल में कई मर्तबा दुआ मांगी थी कि खुदा उस पर रहम करे। उसकी दुआ ही का नतीजा था कि वो मरते-मरते बच गया। लेकिन उसे यक़ीन था कि वो ज़्यादा देर तक ज़िन्दा न रहेगा, इसलिए कि उसका मर्ज़ बहुत घातक था। लेकिन उसके दिल में इतनी ख़्वाहिश ज़रूर पैदा हो गई थी कि वो कुछ दिन ज़िन्दा रहे ताकि मंज़ूर से उसका रिश्ता तुरंत न टूट जाए।

दो-तीन दिन गुज़र गए। मंज़ूर अपनी रोटीन के मुताबिक़ सारा दिन चहकता रहता था। कभी नर्सों से बातें करता, कभी डाक्टरों से, कभी जमादार से। ये भी उसके दोस्त थे। अख़्तर को तो यह महसूस होता था कि वार्ड की बदबूदार फ़िज़ा का हर ज़र्रा उसका दोस्त है। वो जिस की ओर देखता था, तुरंत उसका दोस्त बन जाता था।

दो-तीन रोज़ गुज़रने के बाद जब अख़्तर को मालूम हुआ कि मंज़ूर का निचला धड़ अपंग है तो उसे सख़्त सदमा पहुंचा। लेकिन उसको हैरत भी हुई कि इतने- बड़े नुक़सान के बावजूद वो खुश क्यों कर रहता था। बातें जब उसके मुंह से बुलबुलों के मानिन्द निकलती थीं तो इनहें सुन कर कौन कह सकता था कि उसका निचला धड़ गोश्त-पोस्त का बेजान लोथड़ा है।

अख़्तर ने उससे उसके फालिज के बारे में कोई बात न की। इसलिए कि उस से ऐसी बात पूछना बहुत बड़ी हिमाक़त होती जिस से वो बिल्कुल बेख़बर मालूम होता था। लेकिन उसे किसी तरह से मालूम हो गया कि मंज़ूर एक दिन जब खेल कूद कर वापस आया तो उसने ठण्डे पानी से नहा लिया जिसके कारण एकदम उसका निचला धड़ अपंग हो गया।

मां-बाप का इक्लौता लड़का था। उन्हें बहुत दुख हुआ। शूरू-शुरू में हकीमों का इलाज कराया मगर कोई फायदा न हुआ। फिर टोने-टोटकों का सहारा लिया मगर बेकार। आख़िर किसी के कहने पर उन्होंने उसे हस्पताल

में दाख़िल करा दिया ताकि अच्छी तरह से उसका इलाज होता रहे।

डाक्टर मायूस थे। उन्हें मालूम था कि जिस्म का अपंग हिस्सा कभी ठीक न होगा। मगर फिर भी उसके मां-बाप का जी रखने के लिए वो इसका इलाज कर रहे थे। उन्हें हैरत थी कि वो इतनी देर ज़िन्दा कैसे रहा। इसलिए कि उस पर फ़ालिज का हमला बहुत शदीद था। जिसने उसके जिस्म का निचला हिस्सा बिल्कुल नाकारा करने के सिवा उसके बदन के बहुत से नाजुक अंगों को झंझोड़ कर रख दिया था। वो उस पर तरस खाते थे और उससे प्यार करते थे, इसलिए कि उसने सदा खुश रहने का गुर अपनी इस शदीद बीमारी से सीखा था। उसके मासूम दिमाग़ ने यह तरीक़ा ख़ुद ईजाद किया था कि उसका दुख दब जाए।

अख़्तर पर फिर एक दौरा पड़ा। यह पहले दौरे से कहीं ज़्यादा तकलीफ़देह और ख़तरनाक था मगर उसने सब्र और तहम्मुल से काम लिया और मंज़ूर की मिसाल सामने रख कर अपने दुख दर्द से ग़ाफिल रहने की कोशिश की जिसमें उसे कामियाबी हुई। डाक्टरों को इस मर्तबा तो सौ फीसद यक़ीन था कि दुनिया की कोई ताक़त उसे नहीं बचा सकती, मगर करिश्मा हुआ और रात की ड्यूटी पर लगी नर्स ने सुबह सवेरे उसे दूसरी नर्सों के सुपुर्द किया तो उसकी गिरती हुई नब्ज़ संभल चुकी थी-- वो ज़िन्दा था।

मौत से कुश्ती लड़ते-लड़ते निढाल होकर जब वो सोने लगा तो उसने आधी मुन्दी आंखों से मंज़ूर की तरफ देखा जो स्वप्न-विचार में मगन था। उसका चेहरा दमक रहा था। अख़्तर ने अपने कमज़ोर और बीमार दिल से उसकी पेशानी को चूमा और सो गया।

जब उठा तो मंज़ूर चहक रहा था। उसके सम्बंध में एक नर्स से कह रहा था: "आपा, अख़्तर भाई जान को जगाओ। दवा का वक्त हो गया है।"

"सोने दो-- इसे आराम की ज़रूरत है।"

"नहीं-- वो बिल्कुल ठीक हैं। आप उन्हें दवा दीजिए।"

"अच्छा, दे दूंगी।"

मंज़ूर ने जब अख़्तर की तरफ देखा तो उसकी आंखें खुली हुई थीं, बहुत खुश होकर बाआवाज बुलन्द कहा: "अस्सलामो अलैकुम।"

अख़्तर ने कमज़ोर स्वर में जवाब दिया: "वअलैकुम सलाम।"

"भाई जान! आप बहुत सोए।"

''हां- शायद।''

''नर्स आपके लिए दवा ला रही है।''

अख़्तर ने महसूस किया कि मंज़ूर की बातें उसके कमज़ोर दिल को शक्ति दे रही हैं। थोड़ी देर के बाद ही वो खुद उसी के तरह चहकने-चहकारने लगा। उसने मंजूर से पूछा ''इस मर्तबा भी तुमने मेरे लिए दुआ मांगी थी?''

मंजूर ने जवाब दिया: ''नहीं।''

''क्यों?''

''मैं रोज़-रोज़ दुआएं नहीं मांगा करता-- एक दफा मांग ली, काफी थी। मुझे मालूम था आप ठीक हो जाएंगे।'' उसके लहजे में यक़ीन था।

अख़्तर ने उसे ज़रा सा छेड़ने के लिए कहा: ''तुम दूसरों से कहते रहते हो कि ठीक हो जाओगे, खुद क्यों नहीं दुआ कर घर चले जाते।''

मंजूर ने थोड़ी देर सोचा: ''मैं ठीक हो जाऊंगा। बड़े डाक्टर जी कहते थे कि तुम एक महीने तक चलने फिरने लगोगे-- देखिए ना अब मैं नीचे और ऊपर खिसक सकता हूं।''

उसने कम्बल में ऊपर नीचे खिसकने की नाकाम कोशिश की। अख़्तर ने फौरन कहा: ''वाह मंजूर मियां वाह--- एक महीना क्या है-- यों गुज़र जाएगा।''

मंजूर ने चुटकी बजाई और खुश होकर हंसने लगा।

एक महीने से ज़्यादा अर्सा गुज़र गया। इस दौरान में अख़्तर पर दिल के दो-तीन दौरे पड़े जो ज़्यादा गहरे नहीं थे। अब उसकी हालत अच्छी थी। कमज़ोरी दूर हो रही थी। आसाब में पहला सा तनाव भी नहीं था। दिल की रफ्तार ठीक थी। डाक्टरों का ख़्याल था कि अब वो ख़तरे से बाहर है। लेकिन उनका ताज्जुब बदस्तूर क़ायम था कि वो बच कैसे गया।

अख़्तर दिल ही दिल में हंसता था। उसे मालूम था कि उसे बचाने वाला कौन है। वो कोई इंजेक्शन नहीं था। कोई दवा नहीं थी। वो मंज़ूर था। अपंग मंज़ूर, जिसका निचला धड़ बिल्कुल बेकार हो चुका था, और जिसे यह ख़ुशफहमी थी कि उसके गोश्त-पोस्त के बेजान लोथड़े में ज़िन्दगी के आसार पैदा हो रहे हैं।

अख़्तर और मंजूर की दोस्ती बहुत बढ़ गई थी। मंज़ूर के लिए, उसकी नज़रों में मसीहा का रूत्बा रखती थी कि उसने उसको दोबारा ज़िन्दगी अता की थी और उसके दिलो-दिमाग़ से वो तमाम काले बादल हटा दिये थे, जिनके साये में वो इतनी देर तक घुटी-घुटी ज़िन्दगी बसर करता रहा था।

उसकी नाउमीदी उमीद में तब्दील हो गई थी। उसे ज़िन्दा रहने से दिलचस्पी हो गई थी। वो चाहता था कि बिल्कुल ठीक होकर हस्पताल से निकले और एक नई सेहतमंद ज़िन्दगी बसर करनी शुरू कर दे।

उसे बड़ी उल्झन होती थी जब वो देखता था कि मंज़ूर वैसे का वैसा है। उसके जिस्म के अपंग हिस्से पर हर रोज़ मालिश होती थी। जूं-जूं वक़्त गुज़रता था, उसकी खुश रहने वाली तबीयत अच्छी हो रही थी, यह बात हैरत और उल्झन का कारण थी।

एक दिन बड़े डाक्टर ने मंज़ूर के बाप से कहा कि अब वो उसे घर ले जाए क्योंकि उसका इलाज नहीं हो सकता।

मंज़ूर को सिर्फ इतना पता चला कि अब उसका इलाज हस्पताल के बजाये घर पर होगा और बहुत जल्द ठीक हो जाएगा। मगर उसे सख़्त सदमा पहुंचा। वो घर जाना नहीं चाहता था। अख़्तर ने जब उस से पूछा कि वो हस्पताल में क्यों रहना चाहता है तो उसकी आंखों में आंसू आ गए: ''वहां अकेला रहूंगा। अब्बा दुकान पर जाता है, मां पड़ोस में जाकर कपड़े सीती है। मैं वहां किस से खेला करूंगा। किस से बातें किया करूंगा।''

अख़्तर ने बड़े प्यार से कहा: ''तुम अच्छे जो हो जाओगे मंज़ूर मियां। चन्द दिन की बात है... फिर तुम बाहर अपने दोस्तों से खेला करना। स्कूल जाया करना।''

''नहीं- नहीं। मंज़ूर ने कम्बल से अपना सदा तमतमाने वाला चेहरा ढांप कर रोना शुरू कर दिया। अख़्तर को बहुत दुख हुआ। देर तक वो उसे चुमकारता-पुचकारता रहा। आख़िर उसकी आवाज़ गले में रूंध गई और उसने करवट बदल ली।

शाम को हाउस सर्जन ने अख़्तर को बाताया कि बड़े डाक्टर साहब ने उसकी रीलीज़ का आर्डर दे दिया है। वो सुबह जा सकता है। मंज़ूर ने सुना तो बहुत खुश हुआ।

उसने इतनी बातें कीं, इतनी बातें कीं कि थक गया। हर नर्स को, हर डाक्टर को, हर जमादार को उसने बताया कि भाई जान अख़्तर जा रहे हैं।

रात को भी वो अख़्तर से देर तक खुशी से भरपूर नन्हीं-नन्हीं मासूम बातें करता रहा। आख़िर सो गया। अख़्तर जागता रहा और सोचता रहा कि मंज़ूर कब तक ठीक होगा। क्यों दुनिया में ऐसी दवा मौजूद नहीं जो इस

प्यारे बच्चे को तंदरूस्त कर दे। उसने उसकी सेहत के लिए सच्चे दिल से दुआएं मांगी मगर उसे यक़ीन था कि ये क़बूल नहीं होंगी, इसलिए कि उसका दिल मंज़ूर का सा पाक दिल कैसे हो सकता था।

मंज़ूर और उसकी ज़ुदाई के बारे में सोचते हुए उसे बहुत दुख होता था। उसे यक़ीन नहीं आता था कि सुबह उसको वो छोड़कर चला जाएगा और अपने नये जीवन के निर्माण करने में व्यस्त हो कर, उसे अपने दिलो दिमाग़ से भुला देगा। क्या ही अच्छा होता कि वो मंज़ूर की ''अस्सलामो अलैकुम'' सुनने से पहले ही मर जाता। यह नया जीवन जो उसकी देन था, वो किस मुंह से उठा कर हस्पताल से बाहर ले जाएगा।

सोचते-सोचते अख़्तर सो गया। सुबह देर से उठा। नर्सें वार्ड में इधर-उधर तेज़ी से चल फिर रही थीं। करवट बदल कर उसने मंज़ूर की चारपाई की तरफ देखा। उस पर उसके बाजये एक बूढ़ा, हड्डियों का ढांचा, लेटा हुआ था। एक क्षण के लिए अख़्तर पर सन्नाटा छा गया। एक नर्स पास से गुज़र रही थी, उस से उसने क़रीब- क़रीब चिल्ला कर पूछा: ''मंज़ूर कहां है?''

नर्स रूकी। थोड़ी देर खामोश रहने के बाद उसने बड़े अफ़्सोसनाक लहजे में जवाब दिया: ''बेचारा! सुबह साढ़े पांच बजे मर गया।''

यह सुन अख़्तर को इस इतना सदमा पहुंचा कि उसका दिल बैठने लगा। उसने समझा कि यह आख़िरी दौरा है... मगर उसका ख़्याल ग़लत साबित हुआ। वो ठीक-ठाक था। थोड़ी देर के बाद ही उसे हस्पताल से रूख़्सत होना पड़ा।

क्योंकि उसकी जगह लेने वाला मरीज़ दाख़िल कर लिया गया था।

मिस एडना जैक्सन

... कालेज की पुरानी प्रिंसिपल के तबादले का ऐलान हुआ। लड़कियों ने बड़ा शोर मचाया। वो नहीं चाहती थी कि उनकी महबूब प्रिंसिपल उनके कालेज से कहीं और चली जाए। बड़ा विरोध हुआ। यहां तक कि चन्द लड़कियों ने भूख हड़ताल भी की। मगर फैसला अटल था-- उनका जज़्बाती विरोध थोड़े अर्से के बाद ख़त्म हो गया।

नई प्रिंसिपल ने पुरानी प्रिंसिपल की जगह ले ली। लड़कियों ने शुरू-शुरू में उस से बड़ी नफ़रतो-हिक़ारत का इज़हार किया। मगर उसने इन से कुछ न कहा। हालांकि इख़्तियार में सब कुछ था। वो इनको कड़ी से कड़ी सज़ा दे सकती थी।

हर वक़्त उसके पतले-पतले होंठों पर मुस्कुराहट तैरती रहती-- वो सर ता पा तबस्सुम थी। कालेज में खिली हुई कली की तरह आती और जब वापस जाती तो दिन भर की मसरूफियतों के बावजूद उसमें मुरझाहट के कोई आसार न होते।

थोड़े अर्से के बाद-- कालेज की लड़कियां उनसे प्रेम करने लगीं। हर वक़्त उस से चिमटी रहतीं। एक दिन, जब कोई जलसा था, मिस एडना जैक्सन ने तक़रीर की और कहा: मैं बहुत खुश हूं कि तुम अब मुझ से मानूस हो गई हो। शुरू-शुरू में जैसा कि मैं जानती हूं। तुम मुझ से नफ़रत करती थीं-- मेरी प्यारी बच्चियों, मैं यहां अपनी मर्ज़ी से नहीं आई थी। मुझे यहां मेरे हाकिमों ने भेजा था-- एक दिन आने वाला है जब तुम संजीदा और मतीन बन जाओगी। तुम्हारी गोद में बच्चे खेलते होंगे, तुमसे भी कहीं ज़्यादा शरीर और नटखट। मैं तुम्हारी प्रिंसिपल हूं। लेकिन दिल में यह ख़्याल

कभी न लाना कि मैं कोई ज़ालिम हूं। मैं तुम सब से मुहब्बत करती हूं। और चाहती हूं कि मुझ से भी कोई मुहब्बत करे।''

यह तक़रीर सुन कर लड़कियां बहुत प्रभावित हुईं और मिस जैक्सन की मुहब्बत में और ज़्यादा गिरफ्तार हो गईं। सब दिल ही दिल में शर्मिंदा थीं कि उन्होंने ऐसी अच्छी प्रिंसिपल के आने पर क्यो एतराज़ किया।

एक दिन बी ए की एक लड़की ताहिरा जिसने मिस जैक्सन की आमद पर आवाज़े कसी थी और बड़े सख़्त शब्द इस्तेमाल किए थे, प्रिंसिपल के कमरे में थी।

ताहिरा का सर झुका हुआ था। भय की लकीरें उसके चेहरे पर फैली हुई थीं। प्रिंसिपल काग़ज़ात पर दस्तख़त कर रही थी। काफी बीज़ी थी। थोड़ी देर के बाद जब उसने ताहिरा की सिस्कियों की आवाज़ सुनी तो उनको उसकी मौजूदगी का इल्म हुआ। एकदम चौंक कर उन्होंने अपना नन्हा सा फाउन्टेनपेन एक तरफ रखा और उसकी तरफ ध्यान दिया। उनको याद नहीं रहा कि उन्होंने ताहिरा को बुलाया है।

''क्या बात है ताहिरा?''

ताहिरा की आंखों से आंसू जारी थे: ''आप... आप ही ने तो मुझे यहां तलब फरमाया था।''

एक क्षण के लिए मिस जैक्सन सोचती रही, लेकिन उसे फौरन याद आया कि मामला क्या है। ताहिरा के नाम एक मर्द का मुहब्बत नामा पकड़ा गया था। यह उसकी एक सहेली नाहीद ने मिस जैक्सन के हवाले कर दिया था।

यह ख़त उसकी दराज़ में सुरक्षित था। मिस जैक्सन के मुस्कुराते हुए होंट ताहिरा से मुख़ातिब हुए: ''बेटा-- यह क्या बात है?''

इस के बाद उसने मेज़ का दराज़ खोल कर ख़त निकाला और ताहिरा से कहा: ''लो... यह तुम्हारा ख़त है, पढ़ लो और अगर चाहो तो मुझे सारी दास्तान सुना दो ताकि मैं तुम्हें कोई राय दे सकूं।''

ताहिरा कुछ देर ख़ामोश रही। उसकी समझ में नहीं आता था कि क्या कहे।

प्रिंसिपल मिस जैक्सन ने उठकर उसके कांधे पर प्यार भरा हाथ रखा। ताहिरा! शरमाओ नहीं। हर लड़की की ज़िन्दगी में ऐसे लम्हात आते हैं।''

ताहिरा ने रोना शुरू कर दिया। बूढ़ा चपरासी किसी काम से अन्दर दाख़िल हुआ तो मिस जैक्सन ने उस से कहा: ''निज़ामुद्दीन! अभी तुम

बाहर ठहरो... मैं बुला लूंगी तुम्हें।''

जब वो चला गया तो मिस जैक्सन ने बड़े प्यार से ताहिरा से कहा: ''मुहब्बत एक अज़ीम जज़्बा है। मुझे इस पर क्या एतराज़ हो सकता है। लेकिन तुम्हारे उम्र की लड़कियां अकसर धोखा खा जाया करती हैं-- मुझे तमाम वाक़ियात बता दो। मैं तुम से उम्र में बहुत बड़ी हूं। मगर मुझ से आज तक किसी ने मुहब्बत नहीं की, लेकिन मैने कई सच्ची और झूठी मुहब्बतें देखी हैं। बेटा, मुझ से घबराओ नहीं... बैठ जाओ।''

ताहिरा अपने दोपट्टे से आंसू पोछती कुर्सी पर बैठ गई।

प्रिंसिपल अपनी घूमने वाली कुर्सी पर बैठते हुए अपनी शगिर्द से बोली: ''अब देर न लगाओ-- बता दो-- मुझे बहुत से ज़रूरी काम करने हैं।''

ताहिरा कुछ देर हिचकिचाती रही। लेकिन इसके बाद उसने अपना दिल खोल के प्रिंसिपल के सामने रख दिया। उसने बताया कि एक नौजवान लेकचरार है जिस से वो ट्यूशन लेती है। करीब-क़रीब एक साल से वो नियमित रूप से पांच बजे उसके घर में आता रहा है। उसकी बातें बड़ी दिलफ़रेब हैं। शक्लो-सूरत के लिहाज़ से भी खूब है। फ़ारसी के शेरों का मतलब समझाता है तो एक नक़्शा खींच देता है। उसकी ज़बान में गज़ब की मिठास है।

ताहिरा ने और यह भी बताया कि उसके दिल में लेकचरार के लिए जगह पैदा हो गई। आहिस्ता-आहिस्ता बेक़रार रहने लगी। उसको हर वक़्त उसकी याद सताती। पांच बजने वाले होते तो उसको यूं महसूस होता कि वो मुजस्सम घड़ी बन गई है-- उसका रूआं-रूआं टिक टिक करने लगता।

वो उस से ज़बानी तो कुछ नहीं कह सकती थी, इसलिए कि शर्मो-हया इजाज़त नहीं देती थी। उसने एक रात उस लकचरार के नाम ख़त लिखा। उसने अपनी ज़िन्दगी भर में ऐसा ख़त कभी नहीं लिखा था। हालांकि वो अपने ख़ानदान में ख़त लिखने के मामले में काफी मशहूर थी कि हर बात बड़े सलीके से लिखती है, यह ख़त लिखते हुए उसे बड़ी दिक़्क़तें पेश आईं।

अल्क़ाब क्या हो, मज़मून कैसा होना चाहिए, फिर यह सवाल भी उसके दरपेश था कि हो सकता है कि वो यह ख़त उसके बाप के हवाले कर दे।

वो एक अर्से तक सोचती रही। उसके दिल में कई ख़दशे थे, लेकिन

आख़िर उसने फैसला किया कि वो ख़त ज़रूर लिखेगी। इसलिए उसने राइटिंग पैड के कई काग़ज़ ज़ाया कर चन्द पंक्तियां उस लेकचरार के नाम लिखीं।

"आप बड़े अच्छे उस्ताद हैं। मुझे इस तरह पढ़ाते हैं जैसे-- जैसे आपको मुझ से ख़ास लगाव है। वर्ना इतनी मेहनत कौन उस्ताद करता है-- मेरा तो यह जी चाहता है कि सारी उम्र आप मेरे उस्ताद और मैं आपकी शागिर्द रहूं। बस इस से ज़्यादा मैं और कुछ नहीं लिख सकती।"

यह ख़त उसने कई दिन अपने पर्स में रखा। इसके बाद हिमत से काम लेकर उसने काग़ज़ का यह पुर्ज़ा अपने उस्ताद की जेब में धड़कते हुए दिल के साथ डाल दिया।

दूसरे रोज़ जब वो शाम को ठीक पांच बजे आया तो उसका दिल बहुत ज़ोर से धड़क रहा था। उसने किसी प्रकार की प्रतिक्रिया व्यक्त नहीं की। उसे सख़्त मायूसी हुई। दो घंटे बाद जब वो चला गया तो उसने बड़े चिड़चिड़ेपन से अपनी किताबें उठाईं और अपने कमरे में जाने लगी। एक किताब उसके हाथ से गिर पड़ी। ताहिरा नें बड़ी बेदिली से उठाई तो उसके पन्ने में से कागज़ का एक टुकड़ा झांकने लगा। उसने यह टुकड़ा निकाला। उस पर कुछ शब्द लिखे थे।

ताहिरा के ज़ख़्मी जज़्बात पर मरहम के फाहे लग गए। उसके उस्ताद ने यह लिखा था:

"मुझे तुम्हारी तहरीर मिल गई है... मैं सब कुछ समझ गया हूं। ज़िन्दगी भर तुम्हारा उस्ताद रहने का तो मैं वायदा नहीं कर सकता। लेकिन ख़ादिम ज़रूर रहूंगा। मैं उस्तादी-शागिर्दी से तंग आ गया हूं। तुम्हारी गुलामी इस से हज़ार दर्जे बेहतर होगी।"

इसके बाद दोनों में किताबों के पन्ने की ओट में ख़तो-किताबत होती रही। लेकिन ताहिरा के पैरेंट्स को अचानक शहर छोड़ना पड़ा, इसलिए कि उसके बाप ज़हीर का तबादला किसी दूसरे शहर में हो गया।

ताहिरा को होस्टल में दाख़िल कर दिया गया। जिसकी सुपेरींटेण्डेंट मिस जैक्सन थी। उसका क़याम इसी होस्टल में था।

कालेज से फ़ारिग़ होकर आती तो अपने कमरे में अक्सर नाविल पढ़ती रहती। अजीब-अजीब क़िस्म के। होस्टल की लड़कियां उसके पास आतीं और उसके कई नाविल चुरा कर ले जातीं और मज़े ले-ले कर पढ़तीं। फिर वापस वहीं पर रख देतीं जहां से उन्होंने उठाये थे। मिस जैक्सन को

लड़कियों की इस शरारत का कोई इल्म नहीं था। ताहिरा ने भी कई नाविल पढ़े और उसका इश्क़ अपने उस्ताद के इश्क से बढ़ता गया। वो होस्टल से बाहर निकल नहीं सकती थी। इसलिए उसने एक ख़त लिखा और उसे किसी न किसी तरीक़े से अपने उस्ताद तक पहुंचा दिया।

यह खत जो उस नौजवान लेकचरार ने जवाब में लिखा था। ग़लत हाथों में पहुंच गया। यानी नाहीद के पास जिसको ताहिरा से सिर्फ इसलिए नफ़रत थी कि वो उसके मुक़ाबले में कहीं ज़्यादा खूबसूरत थी-- यह ख़त उसने प्रिंसिपल के हवाले कर दिया।

ताहिरा जब अपनी सारी दास्तान सुना चुकी जो मिस जैक्सन ने बड़ी दिलचस्पी लेते हुए सुनी तो उसने कुछ देर ख़ामोश रहने के बाद ताहिरा से कहा: अब तुम क्या चाहती हो?''

''मुझे कुछ मालूम नहीं-- आप जो फ़रमाएंगी, मुझे मंजूर होगा।''

मिस जैक्सन अपनी कुर्सी पर से उठीं और कहा: ''नहीं ताहिरा, मुहब्बत के मामले में मुझे फ़ैसला देने का इख़्तियार नहीं। यह मज़हब से भी ज़्यादा मुक़द्दस जज़्बा है... तुम ख़ुद बताओ।''

ताहिरा ने शर्म से भरी हुई आंखें जो नम आलूद भी थीं, झुका कर सिर्फ कहा: ''मैं उन से शादी करना चाहती हूं।''

मिस जैक्शन ने ठेठ प्रिंसिपलाना अंदाज़ में पूछा: ''क्या वो भी चाहता है?''

''उसने अभी तक इस ख़्वाहिश का इज़हार नहीं किया... लेकिन वो--''

''मैं समझती हूं। वो भी तुम से मुहब्बत करता है-- उसे क्या उज़्र हो सकता है। लेकिन क्या तुम्हारे वालदैन (पैरेंट्स) रज़ामंद हो जाएंगे?''

''हर्गिज़ नहीं होंगे।''

''क्यों?''

''इसलिए कि वो मेरी मंगनी एक जगह कर चुके हैं।''

''कहां?''

''मेरा ख़ालाज़ाद भाई के साथ।''

''हम क्रिसचनों में तो ऐसा नहीं होता।''

''हमारे यहां तो अक्सर ऐसा होता है।''

ख़ैर छोड़ो इस बात को-- क्या मैं तुम्हारे उस लेक्चरार को अपने पास बुला कर उस से बात चीत करूं? ताहिरा, यह जिन्दगी भर का सवाल है

ऐसा न हो कोई ग़लती हो जाए-- मैं उम्र में तुम से बहुत बड़ी हूं। मैं तुम्हें सही मश्वरा दूंगी। एक मर्तबा तुम मुझे उस से मिल लेने दो।''

ताहिरा ने शुक्रिया अदा किया: '' आप ज़रूर मिलिये लेकिन--- उस से कह दीजियेगा... कि....''

प्रिंसिपल ने बड़े प्यार से कहा: रूक क्यों गई हो-- जो कुछ तुम उससे कहना चाहती हो मुझ से कह दो।''

''बस सिर्फ इतना कि अगर उसके क़दम मज़बूत न रहे तो मैं खुदकुशी कर लूंगी... औरत ज़िन्दगी में-- सिफ़ एक ही मर्द से मुहब्बत करती है।''

मुहब्बत का लफ़्ज़ सुनते ही प्रिंसिपल मिस एड्ना जैक्सन के दिल की झुर्रियां और ज़्यादा गहरी हो गईं। उसने ताहिरा के आंसू अपने रूमाल से बड़ी प्यार पोछे और रूख़्सत कर दिया।

इसके बाद उसने घंटी बजा कर चपरासी को अन्दर बुलाया। उसने बड़े ज़रूरी काग़ज़ात उसके मेज़ पर रखो। उन्होंने सरसरी नज़र से उसको देखा। एक काग़ज़ पर ताहिरा ने उस लेक्चरार के नाम ख़त लिखा कि वो अज़ बराहे-करम उससे किसी वक़्त शाम को बोर्डिंग हाउस में मिले।

यह ख़त उसने लिफाफे में डाला, पता लिखा और चपरासी से कहा कि फौरन साइकिल पर जाए और लिफ़ाफ लेक्चरार को पहुंचा दे।

चपरासी चला गया।

शाम को मिस एड्ना जैक्सन अपने कमरे में बैठी पर्चे देख रही थीं कि नौकर ने इत्तला दी कि एक साहब आप से मिलने आए हैं।

वो समझ गई कि ये साहब कौन हैं, इसलिए नौकर से कहा: ''उन्हें अन्दर ले आओ।''

ताहिरा का उस्ताद ही था जो उसके कमरे में दाख़िल हुआ। मिस जैक्सन ने उसका स्वागत किया। गर्मियों का मौसम था। जून का महीना। सख़्त तपिश थी-- मिस जैक्सन उस से बड़े प्यार के साथ पेश आई। नौजवान लेक्चरार बहुत प्रभावित हुआ।

इधर-उधर की बातें होती रहीं। मिस एड्ना जैक्सन ताहिरा के बारे में बात शुरू करने ही वाली थी कि उस पर हिस्ट्रीया का दौरा पड़ गया। उसको यह मर्ज़ बहुत पहले से था। लेक्चरार बहुत फिक्रमंद हुआ। घर में कोई नौकर नहीं था, इसलिए कि वो छुट्टी कर के कहीं बाहर सो रहे थे।

उसने खुद ही जो उसकी समझ में आया, किया।

जब कालेज गर्मियों की छुट्टियों के बाद खुला तो लड़कियों को यह सुन कर बड़ी हैरत हुई कि उनकी प्रिंसिपल मिस एड्न जैक्सन से उस लेक्चरार की शादी हो गई है, जिसको ताहिरा से मुहब्बत थी-- यह दिलचस्प बात है कि लेक्चरार साहब की उम्र पच्चीस बरस के क़रीब होगी और मिस एड्ना जैक्सन की लगभग पचास बरस।

फ़रिश्ता

सुर्ख़ खुर्दरे कम्बल में अताउल्लाह ने बड़ी मुश्किल से करवट बदली और अपनी मुंदी हुई आंखें आहिस्ता-आहिस्ता खोलीं। कोहरे की दबीज़ चादर में कई चीज़ें लिपटी हुई थीं जिनके सही ख़दोख़ाल नज़र नहीं आते थे। एक लम्बा, बहुत ही लम्बा, न ख़त्म होने वाला दालान था या शायद कमरा था जिसमें धुंधली-धुंधली रौशनी फैली हुई थी। ऐसी रौशनी जो जगह-जगह मैली हो रही थी।

दूर बहुत दूर, जहां शायद यह कमरा या दालान ख़त्म हो सकता था, एक बहुत बड़ा बुत था जिसका दराज़ क़द छत को फाड़ता हुआ बाहर निकल गया था। अताउल्लाह को उसका सिर्फ निचला हिस्सा नज़र आ रहा था जो बहुत भयानक था। उसने सोचा कि शायद यह मौत का देवता है जो अपनी भयंकर शक्ल दिखाने से गुरेज़ कर रहा है।

अताउल्लाह ने होंठ गोल कर के और ज़बान पीछे खींच कर उस भयानक बुत की तरफ देखा और सीटी बजाई, बिलकुल इस तरह जिस तरह कुत्ते को बुलाने के लिए बजाई जाती है। सीटी का बजना था कि उस कमरे या दालान की धुंधली फ़िज़ा में अनगिनत दुमें लहराने लगीं। लहराते-लहराते यह सब एक बहुत बड़े शीशे के मर्तबान में जमा हो गईं, जो ग़ालिबन स्प्रिट से भरा हुआ था। आहिस्ता-आहिस्ता यह मर्तबान फ़िज़ा में बग़ैर किसी सहारे के तैरता डोलता उसकी आंखों के पास पहुंच गया। अब वो एक छोटा सा मर्तबान था जिसमें स्प्रिट के अन्दर उसका दिल डुबकियां लगा रहा था। और धड़कने की नाकाम कोशिश कर रहा था।

अताउल्लाह के कंठ से दबी-दबी चीख़ निकली। उस सीने पर जहां

उसका दिल हुआ करता था उसने अपना कांपता हुआ हाथ रखा और बेहोश हो गया।

मालूम नहीं कितनी देर बाद उसे होश आया मगर जब उसने आंखें खोलीं तो कोहरा ग़ायब था। वो देवहैकल बुत थी। उसका सारा जिस्म पसीने में शराबोर था और बर्फ़ की तरह ठंढा। मगर उस सीने पर जहां उसका दिल था, उसकी बीवी और बच्चों की हड्डियां चटख़ रही थीं, मगर उसके गोश्त-पोस्त और उसकी हड्डियों पर कोई असर नहीं हो रहा था। झुलसा देने वाली तपिश में भी वो ठण्डा था।

उसने एकदम अपने बर्फ़ीले हाथों से अपनी पीले चेहरे वाली बीवी और सूखे के मारे हुए बच्चों को उठाया और फेंक दिया... अब आग उसके अलाव में अर्ज़ियों के पुलंदे के पुलंदे जल रहे थे-- हर ज़बान में लिखी हुई अर्ज़ियां। उन पर उसके अपने हाथ से किए हुए दस्तख़त सब जल रहे थे, आवाज़ पैदा किए बिना।

आग के शालों के पीछे उसे अपना चेहरा नज़र आया। पसीने से-- सर्द पसीने से तरबतर। उसने आग का एक शोला पकड़ा और उस से अपने माथे का पसीना पोछ कर एक तरफ फेंक दिया। अलाव में गिरते ही यह शोला भीगे हुए स्फंज की तरह रोने लगा। अताउल्लाह को उसकी यह हालत देख कर बहुत तरस आया।

अर्ज़ियां जलती रहीं और अताउल्लाह देखता रहा। थोड़ी देर के बाद उसकी पीले चेहरे वाली बीवी प्रकट हुई। उसके हाथ में गुंधे हुए आटे का थाल था। जल्दी-जल्दी उसने पेड़े बनाए और आग में डालना शुरू कर दिये जो आंख झपकने की देर में कोयले बन कर सुलगने लगे। इन्हे देख कर अताउल्लाह के पेट में ज़ोर का दर्द उठा। झपट्टा मार कर उसने थाल में से आख़री पेड़ा उठाया और मुंह में डाल लिया। लेकिन आटा खुश्क था। रेत की तरह। उसकी सांस रूकने लगी और वो फिर बेहोश हो गया।

अब उसने एक बेजोड़ सपना देखना शुरू किया। एक बहुत बड़ी मेहराब थी जिस पर मोटे अक्षर में यह शेर लिखा था:

रोज़े महशर कि जां गुदाज़ बूद
अव्वलीं पुरशिस नमाज़ बूद

वो फ़ौरन पथरीले फर्श पर सजदे में गिर पड़ा। नमाज़ बख़्शवाने के लिए दुआ मांगना चाही, मगर भूख उसके मेदे को इस बुरी तरह डसने लगी कि बिलबिला उठा। इतने में किसी ने बड़ी बा-रोब आवाज़ में पुकारा:

''अताउल्लाह!''

अताउल्लाह खड़ा हो गया। मेहराबों के पीछे-- बहुत पीछे, ऊंचे मेंबर पर एक शख़्स खड़ा था। मादर ज़ाद नंगा, उसके होंठ स्थिर थे मगर आवाज़ आ रही थी।

''अताउल्लाह! तुम क्यों ज़िन्दा हो? आदमी सिर्फ उस वक़्त तक ज़िन्दा रहता है जब तक उसे कोई सहारा हो-- हमें बताओ, कोई ऐसा सहारा है जिसका तुम्हें सहारा हो?-- तुम बीमार हो। तुम्हारी बीवी आज नहीं तो कल बीमार हो जाएगी। वो जिनका कोई सहारा नहीं होता, बीमार होते हैं। ज़िन्दा दरगोर होते हैं। उसका सहारा तुम हो जो बड़ी तेज़ी से ख़त्म हो रहा है। तुम्हारे बच्चे भी ख़त्म हो रहे हैं। कितने अफ्सोस की बात है कि तुमने खुद अपने-आपको ख़त्म नहीं किया। अपने बच्चों और अपनी बीवी को ख़त्म नहीं किया। क्या इस खात्मे के लिए भी तुम्हें किसी सहारे की ज़रूरत है--? तुम रहमो-करम के तालिब हो। बेवकूफ़। कौन तुम पर रहम करेगा। मौत को क्या पड़ी है कि वो तुम्हें मुसीबतों से छुटकारा दिलाए। इसके लिए यह मुसीबत क्या कम है कि वो मौत है। किस-किस को आए। एक सिर्फ तुम अताउल्लाह नहीं हो, तुम ऐसे लाखों अताउल्लाह इस भरी दुनिया में मौजूद हैं। जाओ, अपनी मुसीबतों का इलाज खुद करो। दो मरियल बच्चों और एक भूख से पीड़ित बीवी को जान से मार देना कोई मुश्किल काम नहीं। इस बोझ से हलके हो जाओ तो मौत शर्मसार होकर खुदबखुद तुम्हारे पास चली आएगी।''

अताउल्लाह गुस्से से थरथर कांपने लगा। ''तुम... तुम सबसे बड़े ज़ालिम हो। बताओ, तुम कौन हो। इस से पहले कि अपनी बीवी और बच्चों को जान से मारूं, मैं तुम्हारा ख़ात्मा कर देना चाहता हूं।''

मादरज़ाद नंगे आदमी ने ठहाका लगाया और कहा: ''मैं अताउल्लाह हूं। ग़ौर से देखो। क्या तुम अपने आप को भी नहीं पहचानते?''

अताउल्लाह ने उस नंग-धड़ंग आदमी की तरफ देखा और उसकी गर्दन झुक गई। वो खुद ही था, बिना लिबास के। उसका खून खौलने लगा। फ़र्श में से उसने अपने बढ़े हुए नाखुनों से खुरच-खुरच कर एक पत्थर निकाला और तान कर मेंबर की तरफ़ देखा। इसका सर चकरा गया। माथे पर हाथ रखा तो इसमें से लहू निकल रहा था, वो भागा। पथरीले सेहन से होते हुए जब बाहर निकला तो हुजूम ने उसे घेर लिया। हुजूम का हर फर्द अताउल्लाह था। जिसका माथा लहूलहान था।

बड़ी मुश्किलों से हुजूम को चीर कर वो बाहर निकला। एक तंग और अंधेरी सड़क पर देर तक चलता रहा। इसके दोनों किनारों पर हशीश और थोहर के पौधे उगे हुए थे। इनमें कहीं कहीं दूसरी ज़हरीली बूटियां भी थीं। अताउल्लाह ने जेब से बोतल निकाल कर थोहर का अर्क़ जमा किया। फिर ज़हरीली बूटियों के पत्ते तोड़ कर उसमें डाले और इन्हें हिलाता-हिलाता उस मोड़ पर पहुंच गया जहां से कुछ फ़ासले पर उसका मकान था-- टूटे-फूटे ईटों का ढेर।

टाट का पुराना पर्दा हटा कर वो अन्दर दाख़िल हुआ। सामने ताक़ में मिट्टी के तेल की कुप्पी से काफी रोशनी निकल रही थी। इस मटियाली रौशनी में उसने देखा कि झिलंगी पलंगड़ी पर उसके दोनों मरियल बच्चे मरे पड़े हैं।

अताउल्लाह को बहुत नाउमीदी हुई। बोतल जेब में रख कर जब वो पलंगड़ी के पास गया तो उसने देखा, कि वो फटी-पुरानी गुदड़ी जो उसके बच्चों पर पड़ी है, आहिस्ता-आहिस्ता हिल रही है। अताउल्लाह बहुत खुश हुआ। वो ज़िन्दा थे। बोतल जेब से निकाल कर वो फ़र्श पर बैठ गया।

दोनों लड़के थे। एक चार बरस का, दूसरा पांच का। दोनों भूखे थे। दोनों हड्डियों का ढांचा थे। गुदड़ी एक तरफ हटा कर जब अताउल्लाह ने उनको ग़ौर से देखा तो उसे ताज्जुब हुआ कि इतने छोटे बच्चे इतनी सूखी हड्डियों पर इतनी देर से कैसे ज़िन्दा हैं। उसने ज़हर की शीशी एक तरफ रख दी और उंगलियों से एक बच्चे की गर्दन टटोलते-टटोलते एक झटका दिया। हल्की सी तड़ाख़ हुई और उस बच्चे की गर्दन एक तरफ लटक गई। अताउल्लाह बहुत खुश हुआ कि इतनी जल्दी और इतनी आसानी से काम तमाम हो गया। इसी खुशी में उसने अपनी बीवी को पुकारा। "जैनां! जैनां-- इधर आओ। देखो मैं ने कितनी सफाई से रहीम को मार डाला है। कोई तकलीफ़ नहीं हुई इसको।

उसने इधर-उधर देखा। ज़ैनब कहां है? मालूम नहीं कहां चली गई है? शायद बच्चों के लिए किसी से खाना मांगने गई हो। या अस्पताल में उसकी ख़ैरियत पूछने-- अताउल्लाह हंसा-- मगर उसकी हंसी फौरन दब गई, जब दूसरे बच्चे ने करवट बदली और अपने मुर्दा भाई को बुलाना शुरू किया रहीम-- रहीम।"

वो न बोला तो उसने अपने बाप की तरफ देखा। हड्डियों की छोटी-छोटी स्याह प्यालियों में उसकी आंखें चमकीं: "अब्बा-- तुम आ

गए।''

अताउल्लाह ने धीरे से कहा: ''हां करीम, मैं आ गया।''

रहीम ने अपने हाथ से रहीम को झंझोड़ा। ''उठो रहीम-- अब्बा आ गये अस्पताल से।''

अताउल्लाह ने उसके मुंह पर हाथ रख दिया: ''ख़ामोश रहो। वो सो गया है।''

करीम ने अपने बाप का हाथ हटाया: ''कैसे सो गया। हम दोनों ने अभी कुछ खाया नहीं।''

''तुम जाग रहे थे।''

''हां अब्बा।''

''सो जाओगे अभी तुम।''

''कैसे?''

''मैं सुलाता हूं तुम्हें।'' यह कह अताउल्लाह ने अपनी सख़्त उंगलियां करीम की गर्दन पर रखीं और उसको मरोड़ दिया। मगर तड़ाख़ की आवाज़ पैदा न हुई।

करीम को बहुत दर्द हुआ: '' ये आप क्या कर रहे हैं?''

''कुछ नहीं।'' अताउल्लाह हैरतज़दा था कि उसका यह दूसरा लड़का इतना सख़्त जान क्यों है। क्या तुम सोना नहीं चाहते?''

करीम ने अपनी गर्दन सहलाते हुए जवाब दिया: ''सोना चाहता हूं-- कुछ खाने को दे दो। सो जाऊंगा।''

अताउल्लाह ने ज़हर की शीशी उठाई: ''पहले यह दवा पीलो।''

''अच्छा।'' करीम ने अपना मुंह खोल दिया।

अताउल्लाह ने सारी शीशी उसके कंठ में उंडेल दी और इत्मीनान की सांस लिया: ''अब तुम गहरी नींद सो जाओगे।''

करीम ने अपने बाप का हाथ पकड़ा और कहा: अब्बा-- अब कुछ खाने को दो।''

अताउल्लाह को बहुत कोफ्त हुई: ''तुम मरते क्यों नहीं?''

करीम यह सुन कर सिटपिटा सा गया: ''क्या अब्बा?''

तुम मरते क्यों नहीं। मेरा मतलब है, अगर तुम मर जाओगे तो नीन्द भी आ जाएगी तुम्हें।''

करीम की समझ में न आया कि उसका बाप क्या कह रहा है: ''मारता तो अल्लाह मियां है अब्बा।''

अब अताउल्लाह की समझ में आया कि वो क्या कहे: "मारा करता था कभी। अब उसने यह काम छोड़ दिया है। चलो उठो।"

पलंगड़ी पर करीम थोड़ा सा उठा तो अताउलाह ने उसे अपनी गोद में ले लिया और सोचने लगा कि वो अल्लाह मियां कैसे बने। टाट का पर्दा हटा कर जब बाहर गली में निकला, उसे यों महसूस हुआ जैसे आसमान उस पर झुका हुआ है। इसमें जगह-जगह मिट्टी के तेल की कुप्पियां जल रही थीं। अल्लाह मियां खुदा जाने कहा था-- और ज़ैनब भी। मालूम नहीं वो कहां चली गई थी।

कहीं से कुछ मांगने गई होगी। अताउल्लाह हंसने लगा। लेकिन फ़ौरन उसे ख़्याल आया कि उसे अल्लाह मियां बनना था। सामने मोरी के पास बहुत से पत्थर पड़े थे। इन पर वो अगर करीम को दे मारे तो--

मगर इसमें इतनी ताक़त नहीं थी। करीम उसकी गोद में था। उसने कोशिश की कि उसे अपने बाजुओं में उठाये और सर से ऊपर ले जाकर पत्थरों पर पटक दे, मगर उसकी ताक़त जवाब दे गई। उसने कुछ सोचा और अपनी बीवी को आवाज़ दी: "ज़ना--जैनां।"

जैनब मालूम नहीं कहां है-- कहीं वो उस डाक्टर के साथ तो नहीं चली गई जो हर वक़्त उस से इतनी हमदर्दी का इज़हार करता रहता है। वो ज़रूर उसके फरेब में आ गई होगी। मेरे लिए उसने कहीं खुद को बेच तो नहीं दिया।

यह सोचते ही उसका खून खौल उठा। करीम को पास बहती हुई नदी में फेंक कर वो अस्पताल की तरफ भागा-- इतना तेज़ दौड़ा कि चन्द मिनट में अस्पताल पहुंच गया।

रात आधी से ज़्यादा बीत चुकी थी। चारों तरफ सन्नाटा था। जब वो अपने वार्ड के बरामदे में पहुंचा तो दो आवाज़े सुनाई दीं। एक उसकी बीवी थी। वो कह रही थी। "तुम दग़ाबाज़ हो-- तुमने मुझे धोखा दिया है। इस से जो कुछ तुम्हें मिला है, तुमने अपनी जेब में डाल लिया है।"

"किसी मर्द की आवाज़ सुनाई दी: "बकवास करती हो-- ठीक है कि मैं दो बच्चों की मां हूं-- मेरा वो पहला सा रंग-रूप नहीं रहा... लेकिन वो मुझे क़बूल कर लेता अगर तुम 'भांजी' न मारते--- तुम बहुत ज़ालिम हो--- बड़े कठोर हो---" उसकी आवाज़ गले में रूंधने लगी: "मैं कभी तुम्हारे साथ न चलती--- मैं कभी ज़िल्लत में न गिरती अगर मेरा ख़ाविन्द बीमार और मेरे बच्चे कई दिनों के भूखे न होते-- तुम ने क्यों यह जुल्म

किया?''

उस मर्द ने जवाब दिया: ''वो- वो कोई भी नहीं था। मैं खुद था। जब तुम मेरे साथ चल पड़ीं तो मैंने खुद को पहचाना। और तुमसे कहा कि वो चला गया है। वो, जिसके लिये मैं तुम्हें लाया था-- मुझे मालूम है तुम्हारा ख़ाविन्द मर जायेगा। तुम्हारे बच्चे मर जाएंगे। तुम भी मर जाओगी। लेकिन...''

''लेकिन क्या--'' उसकी बीवी ने तीखी आवाज़ में पूछा।

''मैं मरते दम तक ज़िन्दा रहूंगा। तुमने मुझे उस ज़िन्दगी से बचा लिया जो मौत से कहीं ज़्यादा ख़ौफ़नाक होती-- चलो आओ-- अताउल्लाह हमें बुला रहा है।''

''अताउल्लाह यहां खड़ा है।'' अताउल्लाह ने भिंची हुई आवाज़ में कहा।

दो साये पलटे। उससे कुछ फासले पर वो डाक्टर खड़ा था जो ज़ैनब से बड़ी हमदर्दी का इज़हार किया करता था। उसके मुंह से सिर्फ इतना निकल सका था: ''तुम।''

''हां, मैं... तुम्हारी सब बातें सुन चुका हूं। यह कह कर अताउल्लाह ने अपनी बीवी की तरफ देखा: ''ज़ैनां-- मैने रहीम और करीम, दोनों को मार डाला है--- अब मैं और तुम बाक़ी रह गये हैं।''

ज़ैनब चीखी: ''मार डाला तुमने। दोनों बच्चों को?''

अताउल्लाह ने बड़े पुरसकून लहजे में कहा: ''हां-- उन्हें कोई तकलीफ नहीं हुई... मेरा ख़्याल है तुम्हें भी कोई तकलीफ नहीं... डाक्टर साहब जो मौजूद हैं।''

डाक्टर कांपने लगा-- अताउल्लाह आगे बढ़ा और उससे मुख़ातिब हुआ। ''ऐसा इंजेक्शन दे दो कि फौरन मर जाए।''

डॉक्टर ने कांपते हुए हाथों से अपना बैग खोला और सिरिंज में ज़हर भरके ज़ैनब के टीका लगा दिया। टीका लगते ही वो फर्श पर गिरी और मर गई। उसकी ज़बान पर आख़री शब्द ''मेरे बच्चे-- मेरे बच्चे'' थे, मगर अच्छी तरह अदा न हो सके। अताउल्लाह ने इत्मीनान का सांस लिया। चलो यह भी हो गया-- अब मैं बाक़ी रह गया हूं।''

''लेकिन... लेकिन मेरे पास ज़हर ख़त्म हो गया है।'' डाक्टर के लहजे में मायूसी थी।

अताउल्लाह थोड़ी देर के लिए परेशान हो गया, लेकिन फौरन संभल

कर उसने डाक्टर से कहा: ''कोई बात नहीं--- मैं अन्दर अपने बिस्तर पर लेटा हूं, तुम भाग कर ज़हर लेकर आओ।''

बिस्तर पर लेट कर सुर्ख़ खुर्दरे कम्बल में उसने बड़ी मुश्किल से करवट बदली और अपनी मुंदी हुई आंखें आहिस्ता-आहिस्ता खोलीं। कोरे चादर में कई चीज़ें लिपटी हुई थीं, जिनके सही ख़दोख़ाल नज़र नहीं आते थे-- एक लम्बा, बहुत ही लम्बा, न ख़त्म होने वाला दालान था... या शायद कमरा, जिसमें धुंधली-धुंधली रौशनी फैली हुई थी। ऐसी रौशनी जो जगह-जगह मैली हो रही थी।

दूर बहुत दूर फ़रिश्ता खड़ा था। जब वो आगे बढ़ने लगा, तो छोटा होता गया। अताउल्लाह की चारपाई के पास पहुंच कर वो डाक्टर बन गया। वही डाक्टर जो उसकी बीवी से हर वक़्त हमदर्दी का इज़हार किया करता था। और उसे बड़े प्यार से दिलासा देता था।

अताउलाह ने उसे पहचाना तो उठने की कोशिश की: ''आइये डाक्टर साहब!''

मगर वो एकदम ग़ायब हो गया। अताउल्लाह लेट गया। उसकी आंखें खुली थीं। कोहरा दूर हो चुका था। मालूम नहीं कहां ग़ायब हो गया था।

उसका दिमाग़ भी साफ था। एकदम वार्ड में शोर बुलंद हुआ। सब से ऊंची आवाज़ जो चीख़ से मुशाबा थी, ज़ैनब की थी, उसकी बीवी की-- मालूम नहीं क्या कह रही थी। अताउल्लाह ने उठने की कोशिश की। ज़ैनब को आवाज़ देने की कोशिश की मगर नाकाम रहा-- धुंध फिर छाने लगी और वार्ड लम्बा-- बहुत लम्बा होता चला गया।

थोड़ी देर बाद ज़ैनब आई। उसकी हालत दीवानों की सी हो रही थी। दोनों हाथों से उसने अताउल्लाह को झंझोड़ना शुरू किया: ''मैने उसे मार डाला है-- मैने उस हरामज़ादे को मार डाला है।''

''किस को?''

''उसी को जो मुझ से इतनी हमदर्दी जताया करता था। उसने मुझ से कहा था वो तुम्हें बचा लेगा। वो झूठा था, दग़ाबाज़ था। उसका दिल तवे की कालिख से भी ज़्यादा काला था... उसने मुझे... उसने मुझे--'' इसके आगे ज़ैनब कुछ न कह सकी।

अताउल्लाह के दिमाग़ में बेशुमार ख़्यालात आए और आपस में गुडमुड हो गए। ''तुम्हें तो उसने मार डाला था?''

ज़ैनब चीख़ी: ''नहीं-- मैने उसे मार डाला है।''

अताउल्लाह चन्द लम्हे शून्य में देखता रहा। फिर उसने ज़ैनब को हाथ से एक तरफ हटाया: "तुम इधर हो जाओ-- वो आ रहा है।"

"कौन?"

"वही डाक्टर-- वही फरिश्ता।"

फ़रिश्ता आहिस्ता-आहिस्ता उसकी चारपाई के पास आया। उसके हाथ में ज़हर भरी सिरिंज थी। अताउल्लाह मुस्कुराया: "ले आये।"

फ़रिश्ते ने हां में सर हिलाया: "हां, ले आया।"

अताउल्लाह ने अपना कांपता बाजू उसकी तरफ बढ़ाया: "तो लगा दो।"

फरिश्ता ने सूई उसके बाजू में घोंप दी।

अताउल्लाह मर गया।

ज़ैनब उसे झंझोड़ने लगी: उठो-- उठो! करीम, रहीम के अब्बा, उठो-- यह अस्पताल बहुत बुरी जगह है-- चलो घर चलें।"

थोड़ी देर के बाद पुलिस आई और ज़ैनब को उसके ख़ाविन्द की लाश पर से हटा कर अपने साथ ले गई।

सौदा बेचने वाली

सुहैल और जमील, दोनों बचपन के दोस्त थे-- उनकी दोस्ती को लोग मिसाल के तौर पर पेश करते थे। दोनों स्कूल में इकट्ठे पढ़े। फिर इसके बाद सुहैल के बाप का तबादला हो गया और वो रावलपिंडी चला गया। लेकिन उनकी दोस्ती फिर गो क़ाइम रही। कभी जमील रावलपिंडी चला जाता और कभी सुहैल लाहौर आ जाता।

दोनों की दोस्ती का असल कारण यह था कि वो हुस्नपसंद थे। वो ख़ूबसूरत थे। बहुत ख़ूबसूरत लेकिन वो आम ख़ुबसूरत लड़कों की तरह बद-किर्दार नहीं थे। उनमें कोई ऐब नहीं था।

दोनों ने बी.ए. पास किया। सुहैल ने रावलपिंडी के गार्डन कालेज और जमील ने लाहौर के गवर्नमेंट कालेज से बड़े अच्छा नम्बरों पर। इस ख़ुशी में उन्होंने बहुत बड़ी दावत की। इसमें कई लड़कियां भी शामिल थीं।

जमील क़रीब-क़रीब सब लड़कियों को जानता था। मगर एक लड़की को जब उसने देखा, जिस से वो बिलकुल अपरिचित था, तो उसे ऐसा महसूस हुआ कि उसके सारे ख़्वाब पूरे हो गए हैं। उसने उस लड़की के सम्बंध में जिसका नाम जमीला था, पता किया तो मालूम हुआ कि वो सलमा की छोटी बहन है। सलमा के मुक़ाबले में जमीला बहुत हसीन थी। सलमा की शक्ल सूरत साधारण थी। लेकिन जमीला का हर नक़्श तीखा था। जमीला उसको देखते ही उसकी मुहब्बत में गिरफ्तार हो गया।

उसने फौरन अपने दिल के जज़्बात से अपने दोस्त को आगाह कर दिया। सुहैल ने उस से कहा: "हटाओ यार-- तुमने उस लड़की में क्या देखा है जो इस बुरी तरह लट्टू हो गये हो?"

जमील को बुरा लगा: तुम्हें हुस्न की परख नहीं। अपना अपना दिल है। तुम्हें अगर जमीला में कोई बात नज़र नहीं आई तो इसका यह मतलब नहीं कि मुझे दिखाई न दी हो।''

सुहैल हंसा: ''तुम नाराज़ हो रहे हो। लेकिन मैं फिर भी यही कहूंगा कि तुम्हारी यह जमीला बर्फ की डली है, इसमें हरारत (गर्मी) नाम को भी नहीं। औरत का दूसरा नाम हरारत है।''

''हरारत पैदा कर ली जाती है।''

''बर्फ में?''

''बर्फ भी तो हरारत से पैदा होती है।''

''तुम्हारा यह तर्क अजीबो-ग़रीब है। अच्छा भई जो चाहते हो, सो करो। मैं तो यही मश्वरा दूंगा कि उसका ख़्याल अपने दिल से निकाल दो इसलिए कि वो तुम्हारे लायक़ नहीं है। तुम उससे कहीं ज़्यादा खूबसूरत हो।''

दोनों में हलकी सी बकझक हुई लेकिन फौरन सुलह हो गई। जमील सुहैल के मश्वरे के बग़ैर अपनी ज़िन्दगी में कोई क़दम नहीं उठाता था। उसने जब अपने दोस्त पर यह ज़ाहिर कर दिया कि वो जमीला के बग़ैर ज़िन्दा नहीं रह सकता तो सुहैल ने इजाज़त दे दी कि जिस क़िस्म की 'झक' चाहे, मार सकता है।

सुहैल रावलपिंडी चला गया। जमील ने जो जमीला के इश्क़ में बुरी तरह गिरफ्तार था, उस तक पहुंचने की कोशिश शुरू कर दी। मगर मुसीबत यह थी कि उसकी बड़ी बहन सलमा उसको मुहब्बत की नज़रों से देखती थी।

उसने उनके घर आना जाना शुरू किया तो सलमा बहुत खुश हुई। वो यह समझती थी कि जमील उसके जज़्बात जान चुका है इसलिए उस से मिलने आता है। चुनांचि उसने न समझने वाले अल्फाज़ में अपनी मुहब्बत का इज़्हार शुरू कर दिया। जमील सख़्त परेशान था कि क्या करे।

जब वो उनके घर जाता तो सलमा अपनी छोटी बहन को किसी न किसी बहाने से अपने कमरे से बाहर निकाल देती और जमील दांत पीस कर रह जाता।

कई बार उसके जी में आया कि वो सलमा से साफ-साफ कह दे कि वो किस गर्ज़ से आता है। उसको सलमा से कोई दिलचस्पी नहीं, वो उसकी छोटी बहन से मुहब्बत करता है।

बेहद मुख़्तसर लम्हात में जो जमील को जमीला की चन्द झलकियां देखने के लिए नसीब होते थे, उसने आंखों ही आंखों में उस से कई बातें करने की कोशिश की और यह सफल साबित हुआ।

एक दिन उसे जमीला का रूक़्क़ा मिला जिसकी इबारत यह थी:

''मेरी बहन जिस ग़लतफहमी में गिरफ्तार हैं, उसको आप दूर क्यों नहीं करते। मुझे मालूम है कि आप मुझ से मिलने आते हैं। लेकिन बाजी की मौजूदगी में आपसे कोई बात नहीं हो सकती। अलबत्ता आप बाहर जहां भी चाहें, मैं आ सकती हूं।''

जमील बहुत खुश हुआ। लेकिन उसकी समझ में नहीं आता था कि कौन सी जगह मुक़र्रर करे, और फिर जमीला को इसकी ख़बर कैसे दे। उसने कई मुहब्बत नामे लिखे और फाड़ दिए। इसलिये कि इनकी तरसील बड़ी मुश्किल थी। आख़िर उसने सोचा कि सलमा से मिलने जाए और मौक़ा मिले तो जमीला को इशारतन वो जगह बता दे जहां वो उससे मिलना चाहता है।

क़रीब-क़रीब एक महीने तक वो सलमा से मिलने जाता रहा मगर कोई मौक़ा न मिला। लेकिन एक दिन जब जमीला कमरे में मौजूद थी और सलमा उसे किसी बहाने से बाहर निकालने वाली थी, जमील ने बड़ी बेरब्ती से बड़बड़ाते हुए कहा: ''लारेंस गार्डन- पांच बजे।''

जमीला ने यह सुना और चली गई। सलमा ने बड़ी हैरत से पूछा: ''यह आपने क्या कहा था?''

''तुम ही से तो कहा था?''

''क्या कहा था?''

''लारेंस गार्डन... पांच बजे।''

... मैं चाहता था कि तुम कल लारेंस गार्डन मेरे साथ चलो। मेरा जी चाहता है एक पिकनिक हो जाए।''

सलमा खुश हो गई और फौरन रज़ामन्द हो गई कि वो जमील के साथ दूसरे रोज़ शाम को पांच बजे लारेंस गार्डन जरूर जाएगी। वो सैंडविचेज़ बनाने में मुहारत रखती थी, चुनांचि उसने बड़े प्यार से कहा: चिकन सैंडविचेज़ का इन्तेज़ाम मेरे ज़िम्मे रहा।''

उसी शाम को पांच बजे लारेंस बाग़ में जमील और जमीला सैंडविच बने हुए थे। जमील ने उस पर अपनी वालिहाना मुहब्बत का इज़्हार किया तो जमीला ने कहा: मैं इस बात को जानती थी। पर क्या करूं, बीच में

बाज़ी जो थीं।

"तो अब क्या किया जाए?"

"ऐसी मुलाक़ातें ज़्यादा देर तक जारी नहीं रह सकेंगी।"

"ये तो ठीक है... कल मुझे एक मुलाक़ात के सिलसिले में तुहारी बाजी के साथ यहां आना पड़ेगा।"

"इसीलिए तो मैं सोचती हूं कि इसका क्या हल हो सकता है।"

"तुम हौसला रखती हो?"

"क्यों नहीं... आप क्या चाहते हैं मुझ से?... मैं अभी आपके साथ जाने के लिए तैयार हूं... बताइये कहां चलना है?"

"इतनी जल्दी न करो... मुझे सोचने दो।"

"आप सोच लीजिये।"

"कल शाम को चार बजे तुम किसी न किसी बहाने से यहां चली आना, मैं तुम्हारा इंतेज़ार कर रहा होऊंगा। इसके बाद हम रावलपिंडी रवाना हो जाएंगे।"

"तूफान भी हो तो मैं कल उस मुक़र्रा वक़्त पर यहां पहुंच जाऊंगी।"

"अपने साथ ज़ेवर वग़ैरह मत लाना।"

"क्यों?"

"मैं तुम्हें खुद ख़रीद के दे सकता हूं।"

"मैं अपने ज़ेवर नहीं छोड़ सकती-- बाजी ने मुझे अपनी एक बाली भी आज तक पहनने के लिए नहीं दी। मैं अपने ज़ेवर उसके लिए छोड़ जाऊं?"

दूसरे दिन शाम को सलमा सैंडविचेज़ तैयार करने में मसरूफ थी कि जमीला ने अलमारी में से अपने ज़ेवर और अच्छे-अच्छे कपड़े निकाले, इन्हें सूटकेस में बन्द किया और बाहर निकल गई। किसी को कानों कान भी ख़बर न हुई। सलमा बैठी सैंडविचेज़ तैयार करती रही और जमील और जमीला दोनों रेल में सवार थे जो राविलपिंडी की तरफ तेज़ी से जा रही थी।

रावलपिंडी पहुंच कर जमील अपने दोस्त सुहैल के पास गया जो इत्तेफाक़ से घर में अकेला था। उसके वालदैन ऐबटाबाद में मुंतक़िल हो गए थे। सुहैल ने जब एक बुर्क़ापोश औरत जमील के साथ देखी तो उसे बहुत हैरत हुई। मगर उसने अपने दोस्त से कुछ न पूछा।

जमील ने उस से कहा: "मेरे साथ जमीला है-- मैं इसे अग़वा कर

के तुम्हारे पास लाया हूं।

सुहैल ने पूछा, "अग़वा करने की क्या ज़रूरत थी?"

"बड़ा लम्बा क़िस्सा है-- मैं फिर कभी तुम्हें सुना दूंगा--" फिर जमील जमीला से मुख़ातिब हुआ: "बुर्क़ा उतार दो और इस घर को अपना घर समझो। सुहैल मेरा अज़ीज़ तरीन दोस्त है।"

जमीला ने बुर्क़ा उतार दिया और शर्मीली निगाहों से जिनमें किसी और जज़्बे की भी झलक थी, सुहैल की तरफ देखा। सुहैल के होंठों पर अजीब क़िस्म की मुस्कुराहट फैल गई। वो अपने दोस्त से मुखातिब हुआ: "अब तुम्हारा इरादा क्या है?"

जमील ने जवाब दिया: "शादी करने का-- लेकिन फ़ौरन नहीं मैं आज ही वापस लाहौर जाना चाहता हूं ताकि वहां के हालात मालूम हो सकें-- हो सकता है बहुत बड़ी गड़बड़ हो चुकी हो। मैं अगर वहां पहुंच गया तो मुझ पर किसी को शक नहीं होगा। दो तीन रोज़ वहां रहूंगा। इस दौरान में तुम हमारी शादी का इंतेज़ाम कर देना।"

सुहैल ने अज़ राहे-मज़ाक कहा: "बड़े अक़लमन्द होते जा रहे हो तुम।" जमील उसकी तरफ देख कर मुस्कुराया: "तुम्हारी सोहबत ही का नतीजा है।"

"तुम आज ही चले जाओगे?"

जमील ने जवाब दिया: "अभी-- इसी वक़्त। मुझे सिर्फ इस सर्माया-ए-हयात को तुम्हारे सपुर्द करना था। यह मेरी अमानत है।"

जमीन अपनी जमीला को सुहैल के हवाले कर के वापस लाहौर आ गया। वहां काफी गड़बड़ मची हुई थी। वो सलमा से मिलने गया। उसने शिकायत की कि वो कहां ग़ायब हो गया था। जमील ने उस से झूठ बोला: "मुझे सख़्त ज़ुकाम हो गया था। अफ्सोस है कि मैं तुम्हें इसकी ख़बर न दे सका। इसलिए कि हमारा टेलीफोन ख़राब था और नौकर को अम्मी जान ने किसी वजह से बरतरफ कर दिया था।"

सलमा जब संतुष्ट हो गई तो उसने जमील को बताया कि उसकी बहन कहीं ग़ायब हो गई है। बहुत तलाश की है मगर नहीं मिली। अपने ज़ेवर कपड़े साथ ले गई है... मालूम नहीं किसके साथ भाग गई है।

जमील ने बड़ी हमदर्दी का इज़हार किया। सलमा प्रभावित हुई और उसे और भी यकीन हो गया कि जमील उस से मुहब्बत करता है। उसकी आंखों में आंसू आ गए। जमील ने हमदर्दी ज़ाहिर करने की खातिर अपनी

जेब से रूमाल निकाल कर उसकी नमनाक आंखें पोछीं और बनावटी मुहब्बत का इज़्हार किया। सलमा अपनी बहन की गुमशुदगी का सदमा कुछ देर के लिए भूल गई।

जब जमील को इत्मीनान हो गया कि उस पर किसी को भी शुबह नहीं तो वो टैक्सी में रावलपिंडी पहुंचा। बड़ा बेताब था। लाहौर में उसने तीन दिन कांटों पर गुज़ारे थे। हर वक़्त उसकी आंखों के सामने जमीला का हसीन चेहरा नाचता रहता।

धड़कते हुए दिल के साथ वो जब अपने दोस्त के घर पहुंचा तो उसने जमीला को आवाज़ दी। उसको यक़ीन था कि उसकी आवाज़ सुनते ही वो उड़ती हुई आएगी और उसके सीने के साथ चिमट जाएगी-- "मगर उसे ना उमीदी हुई।"

उसका दोस्त उसकी आवाज़ सुन कर आया। दोनों एक दूसरे के गले मिले। जमील ने थोड़ी देर बाद पूछा: "जमीला कहां है?"

सुहैल ने कोई जवाब न दिया। जमील बड़ा बेचैन था। उसने फिर पूछा: "यार... जमीला को बुलाओ।"

सुहैल ने बड़े सख़्त लहजे में कहा: "वो तो उसी रोज़ चली गई थी।"

"क्या मतलब?"

'जब तुम यहां उसे छोड़ कर गये तो वो दो तीन घंटों के बाद ग़ायब हो गई... उसे ग़ालिबन तुम से मुहब्बत नहीं थी।"

जमील फिर लाहौर आया। मगर सलमा से उसे मालूम हुआ कि उसकी बहन अभी तक ग़ायब है। बहुत ढूंढा मगर नहीं मिली। चुनांचि जमील को फिर रावलपिंडी जाना पड़ा ताकि वो उसकी तलाश वहां करे।

वो अपने दोस्त के घर न गया। उसने सोचा कि होटल में ठहरना चाहिए। जहां से इस सिलसिले की जानकारी हासिल होने की उमीद हो सकती है। जब उसने रावलपिंडी के एक होटल में कमरा किराये पर लिया तो उसने देखा कि उसकी जमीला साथ वाले कमरे में सुहैल की आगोश में है।

वो उसी वक़्त अपने कमरे से निकल आया। लाहौर पहुंचा। जमीला के ज़ेवरात उसके पास थे, ये उसने बीमा करा कर अपने दोस्त को भेज दिये और सिर्फ चन्द अल्फाज़ एक काग़ज़ पर लिख कर साथ रख दिए। "मैं तुम्हारी कामयाबी पर मुबारकबाद पेश करता हूं... जमीला को मेरा सलाम पहुंचा देना।"

दूसरे दिन वो सलमा से मिला। वो उसको जमीला से कहीं ज़्यादा खूबसूरत दिखाई दी। वो अपनी बहन की गुमशुदगी के ग़म में रो रही थी। जमील ने उसकी आंखें चूमीं और कहा: "ये आंसू बेकार ज़ाया न करो.. इन्हें उन के लिए महफ़ूज़ रखो जो इनके मुस्तहक़ हों।"

"लेकिन वो मेरी बहन है"

"बहनें एक जैसी नहीं होतीं... उसे भूल जाओ।"

जमील ने सलमा से शादी कर ली। दोनों बहुत खुश थे। गर्मियों में 'मरी' गए तो वहां उन्होंने जमीला को देखा जिसका हुस्न मांद पड़ गया था और निहायत वाहियात क़िस्म का मेकअप किए थी। पिंडी प्वाइंट पर यों चल-फिर रही थी जैसे उसे कोई सौदा बेचना है।

बदसूरती

साजिदा और हामिदा दो बहनें थीं। साजिदा छोटी और हामिदा बड़ी। साजिदा ख़ुश-शक्ल थी।

उनके मां-बाप को यह मुश्किल दर पेश थी कि साजिदा के रिश्ते आते मगर हामिदा के लिए कोई बात न करता। साजिदा ख़ुश-शक्ल थी, मगर इसके साथ उसे बनना संवरना भी आता था।

इसके मुक़ाबले में हामिदा बहुत सीधी-साधी थी। उसके ख़दो-ख़ाल भी पुरकशिश न थे। साजिदा बड़ी चंचल थी। उसकी आवाज़ भी अच्छी थी, सुर में गा सकती थी। हामिदा को कोई पूछता भी नहीं था।

इसी दौरान में साजिदा की एक खूबसूरत लड़के से ख़तो-किताबत शुरू हो गई जो उस पर बहुत दिनों से मरता था। यह लड़का अमीर घराने का था। एम.ए. कर चुका था और उच्च शिक्षा पाने के लिए अमेरिका जाने की तैयारियां कर रहा था। उसके मां-बाप चाहते थे कि उसकी शादी हो जाए ताकि वो बीवी को अपने साथ ले जाए।

हामिदा को मालूम था कि उसकी छोटी बहन से वो लड़का बे पनाह मुहब्बत करता है। एक दिन जब साजिदा ने उसे इस लड़के का इश्क़िया जज़्बात से लबरेज़ ख़त दिखाया तो वो दिल ही दिल में बहुत कुढ़ी। इसलिए कि उसका चाहने वाला कोई भी नहीं था। उसने इस ख़त का हर लफ़्ज़ बार-बार पढ़ा और उसे ऐसा महसूस हुआ कि उसके दिल में सुईयां चुभ रही हैं। मगर उसने इस दर्दो-कर्ब में एक अजीब क़िस्म की लिज़्ज़त महसूस की। लेकिन वो अपनी छोटी बहन पर बरस पड़ी।

"तुम्हें शर्म नहीं आती कि ग़ैर मर्दों से ख़तो-किताबत करती हो।"

साजिदा ने कहा: "बाजी-- इसमें क्या ऐब है!"

"ऐब!-- सरासर ऐब है। शरीफ घरानों की लड़कियां कभी ऐसी बेहूदा हरकतें नहीं करतीं--- तुम उस लड़के हामिद से मुहब्बत करती हो?"

"हां"

"लानत है तुम पर।"

साजिदा भिन्ना गई: "देखो बाजी मुझ पर लानतें न भेजो-- मुहब्बत करना कोई जुर्म नहीं।"

हामिदा चिल्लाई: "मुहब्बत मुहब्बत-- आख़िर यह क्या बकवास है।"

साजिदा ने बड़े व्यंग से कहा: "जो आपको नसीब नहीं।"

हामिदा की समझ में न आया कि वो क्या कहे? चुनांचि खोखले गुस्से में आकर उसने छोटी बहन के मुंह पर ज़ोरदार थप्पड़ मार दिया-- इसके बाद दोनों एक दूसरे से उलझ गईं।

देर तक उनकी हाथा पाई होती रही। हामिदा उसको यह कोसने देती रही कि वो एक 'नामेहरम' मर्द से इश्क़ लड़ा रही है। साजिदा उस से यह कहती कि वो जलती है, इसलिए उसकी तरफ कोई मर्द आंख उठा कर भी नहीं देखता।

हामिदा डील-डौल के लिहाज़ से अपनी छोटी बहन के मुक़ाबले में काफी तगड़ी थी। इसके इलावा उसमें जुनून भी था जिसने उसके अन्दर और भी शक्ति पैदा कर दी थी। उसने साजिदा को ख़ूब पीटा। उसके घने बालों की कई खूबसूरत लटें नोच डालीं और खुद हांपती-हांपती अपने कमरे में जाकर ज़ारो-क़तार रोने लगी।

साजिदा ने घर में इस हादसे के बारे में कुछ न कहा-- हामिदा शाम तक रोती रही। बेशुमार ख़्यालात उसके दिमाग़ में आए वो नादिम थी कि उस से कोई मुहब्बत नहीं करता। अपनी बहन को, जो बड़ी नाजुक है, पीट डाला।

वो साजिदा के कमरे में गई। दरवाज़े पर दस्तक दी और कहा: "साजिदा!"

साजिदा ने कोई जवाब न दिया।

हामिदा ने फिर ज़ोर से दस्तक दी और रोनी आवाज़ में पुकारी: "साजी! मैं माफी मांगने आई हूं। खुदा के लिए दरवाज़ा खोलो।"

हामिदा इस पन्द्रह मिनट तक दहलीज के पास आंखों में डबडबाए आंसू लिए खड़ी रही। उसे यक़ीन नहीं था कि उसकी बहन दरवाज़ा खोलेगी। मगर वो खुल गया।

साजिदा बाहर निकली और अपनी बड़ी बहन से हमआग़ोश हो गई: ''क्यों बाजी... आप रो क्यों रही हैं?''

हामिदा की आंखों में से टप-टप आंसू गिरने लगे: ''मुझे अफसोस है कि तुम से आज बेकार लड़ाई हो गई।''

''बाजी-- मैं बहुत नादिम हूं कि मैने आपके लिए ऐसी बात कह दी जो मुझे नहीं कहनी चाहिए थी।''

''तुमने अच्छा किया साजिदा-- मैं जानती हूं कि मेरी शक्लो-सूरत में कोई कशिश नहीं-- खुदा करे तुम्हारा हुस्न क़ायम रहे।''

''बाज़ी!-- मैं बहुत हसीन नहीं हूं। अगर मुझ में कोई ख़ूबसूरती है तो मैं दुआ करती हूं कि खुदा उसे मिटा दे-- मैं आपकी बहन हूं-- अगर आप मुझे हुक्म दें तो मैं अपने चेहरे पर तेज़ाब डालने के लिए तैयार हूं।''

''कैसी फ़िज़ूल बातें करती हो-- क्या बिगड़े हुए चेहरे के साथ तुम्हें हामिद क़बूल कर लेगा?''

''मुझे यक़ीन है।''

''किस बात का?''

वो मुझ से इतनी मुहब्बत करता है कि अगर मैं मर जाऊं तो वो मेरी लाश से शादी करने के लिए तेयार होगा।''

''यह महज़ बकवास है।''

''होगी-- लेकिन मुझे इसका यक़ीन है। आप उसकी सारी चिट्ठियां पढ़ती रही हैं। क्या उन से आपको यह पता नहीं चला कि वो मुझ से क्या-क्या पैमान कर चुका है।''

''साजी--'' यह कह कर हामिदा रूक गई। थोड़ी देर के बाद उसने कांपती आवाज़ में कहा: ''मैं अहदो-पैमान के बारे में कुछ नहीं जानती।'' और रोना शुरू कर दिया।

उसकी छोटी बहन ने उसे गले से लगाया। उसको प्यार किया और कहा: ''बाजी-- आप अगर चाहें तो मेरी ज़िन्दगी संवर सकती है।''

''कैसे?''

''मुझे हामिद से मुहब्बत है-- मैं उस से वायदा कर चुकी हूं कि अगर मेरी कहीं शादी होगी तो तुम्हीं से होगी।''

''तुम मुझ से क्या चाहती हो?''

''मैं यह चाहती हूं-- कि आप इस मामले में मेरी मदद करें। अगर वहां से पैग़ाम आए तो आप उसके हक़ में गुफ्तुगू कीजिए। अम्मी और अब्बा आपकी हर बात मानते हैं।''

''मैं इंशाअल्लाह तुम्हें नाउमीद नहीं करूंगी।''

साजिदा की शादी हो गई: हालांकि उसके मां-बाप पहले हामिदा की शादी करना चाहते थे। मजबूरी थी, क्या करते। साजिदा अपने घर में खुश थी। उसने अपनी बड़ी बहन की शादी के दूसरे दिन ख़त लिखा, जिसका मज़मून कुछ इस तरह का था।

''मैं बहुत खुश हूं। हामिद मुझ से बेइंतहा मुहब्बत करता है। बाजी-- मुहब्बत अजीबो-ग़रीब चीज़ है। खुदा करे कि आप भी इस मुसर्रत से महजूज़ हों।''

इसके इलावा और बहुत सी बातें उस ख़त में थीं जो एक बहन अपनी बहन को लिख सकती है।

हामिदा ने यह पहला ख़त पढ़ा और बहुत रोई। उसे ऐसा महसूस हुआ कि उसका हर लफ़्ज़ एक हथौड़ा है। जो उसके दिल पर चोट पहुंचा रहा है।

इसके बाद उसको और भी ख़त आए। जिन को पढ़-पढ़ के उसके दिल पर छुरियां चलती रहीं।

रो-रो कर उसने अपना बुरा हाल कर लिया था-- उसने कई मर्तबा कोशिश की कि कोई राह चलता हुआ जवान लड़का उसकी तरफ ध्यान दे, मगर नाकाम रही।

उसे इस अर्से में एक अधेड़ उम्र का मर्द मिला। बस में मुठभेड़ हुई। वो उस से बात चीत करना चाहता था मगर हामिदा ने उसे पसंद न किया। वो बहुत बदसूरत था।

दो बरस के बाद उसकी बहन साजिदा का ख़त आया कि वो और उसके शौहर आ रहे हैं।

वो आए। हामिदा ने बहुत अच्छी तरह से स्वागत किया। साजिदा के शौहर को अपने कारोबार के सिलसिले में एक हफ्ते तक ठहरना था।

साजिदा से मिल कर उसकी बड़ी बहन बहुत खुश हुई। हामिद बड़ी खुशअख़्लाक़ी से पेश आया। वो उस से भी प्रभावित हुई।

वो घर में अकेली थी, इसलिए कि उसके मां-बाप किसी काम से

सरगोधा चले गए थे। गर्मियों का मौसम था। हामिदा ने नौकरों से कहा कि वो बिस्तरों का इंतेज़ाम सेहन में कर देऔर बड़ा पंखा लगा दिया जाए।

यह सब कुछ हो गया। लेकिन हुआ यह कि साजिदा किसी हाजत के तहत ऊपर कोठे पर गई और देर तक वहीं रही। हामिद कोई इरादा कर चुका था। आंखें नींद से बोझल थीं। उठकर "साजिदा" के पास गया और उसके साथ लेट गया। लेकिन उसकी समझ में न आया कि वो ग़ैर सी क्यों लगती है। क्यों वो शुरू-शुरू में ठंडी बनी रही। आख़िर में ठीक हो गई।

साजिदा कोठे से उतर कर नीचे आई और उसने देखा...

सुबह को दोनों बहनों में सख़्त लड़ाई हुई-- हामिद भी इसमें शामिल था। उसने गर्मा-गर्मी में कहा: "तुम्हारी बहन, मेरी बहन है-- तुम क्यों मुझ पर शक करती हो।"

हामिद ने दूसरे रोज़ अपनी बीवी साजिदा को तलाक़ दे दी और दो-तीन महीनों के बाद हामिदा से शादी कर ली।-- उसने अपने एक दोस्त से जिस को इस पर एतराज़ था, सिर्फ इतना कहा: "खूबसूरती में खुलूस होना नामुम्किन है-- बदसूरती हमेशा पुरखुलूस होती है।"

टोबा टेक सिंह

बंटवारे के दो-तीन साल बाद पाकिस्तान और हिन्दुस्तान की हुकूमतों को ख़याल आया कि सामाजिक क़ैदियों की तरह पागलों का भी तबादला होना चाहिए, यानी जो मुसलमान पागल हिंदुस्तान के पागलख़ानों में हैं, उन्हें पाकिस्तान पहुंचा दिया जाए और जो हिंदू और सिख पाकिस्तान के पागलख़ाने में हैं, उन्हें हिंदुस्तान के हवाले कर दिया जाए।

मालूम नहीं, यह बात उचित थी या अनुचित फिर भी बुद्धमानों के फैसले के मुताबिक इधर-उधर ऊंची सतह की कान्फ्रेंसें हुईं और आख़िर पागलों के तबादले के लिए एक दिन निश्चित हो गया।

अच्छी तरह छानबीन की गई- वे मुसलमान पागल जिनके सगे-संबंधी हिंदुस्तान ही में थे, वहीं रहने दिए गए; बाक़ी जो बचे, उनको सरहद पर रवाना कर दिया गया। पाकिस्तान से चूंकि करीब-क़रीब तमाम हिंदू-सिख जा चुके थे, इसलिए किसी को रखने-रखाने का सवाल ही पैदा नहीं हुआ। जितने हिंदू-सिख पागल थे, सबके-सब पुलिस की हिफ़ाज़त में बॉर्डर पर पहुंचा दिए गए।

उधर का मालूम नहीं लेकिन इधर लाहौर के पागलख़ाने में जब इस तबादले की ख़बर पहुंची तो बड़ी दिलचस्प गपशप होने लगीं।

एक मुसलमान पागल जो बारह बरस से, हर रोज़, बाकायदगी के साथ ज़मींदार पढ़ता था, उससे जब उसके एक दोस्त ने पूछा: "मौलवी साब, यह पाकिस्तान क्या होता है...?" तो उसने बड़े सोच-विचार के बाद जवाब दिया: "हिंदुस्तान में एक ऐसी जगह है जहां उस्तरे बनते हैं...!" यह जवाब सुनकर उसका दोस्त संतुष्ट हो गया।

इसी तरह एक सिख पागल ने एक दूसरे सिख पागल से पूछा: ''सरदार जी, हमें हिंदुस्तान क्यों भेजा जा रहा है... हमें तो वहां की बोली नहीं आती..।'' दूसरा मुस्कुराया: ''मुझे तो हिंदुस्तोनों की बोली आती है, हिंदुस्तानी बड़े शैतानी आकड़-आकड़ फिरते हैं...।''

एक दिन, नहाते-नहाते, एक मुसलमान पागल ने 'पाकिस्तान: जिन्दाबाद' का नारा इस ज़ोर से बुलंद किया कि फर्श पर फिसलकर गिरा और बेहोश हो गया।

बाज़ पागल ऐसे भी थे जो पागल नहीं थे, उनमें ज्यादातर तादाद ऐसे क़ातिलों की थी जिनके रिश्तेदारों ने अफसरों को कुछ दे दिलाकर पागलखाने भिजवा दिया था कि वह फांसी के फंदे से बच जाएं, यह पागल कुछ-कुछ समझते थे कि हिंदुस्तान क्यो तक़्सीम हुआ है और यह पाकिस्तान क्या है, लेकिन सही वाक़ियात से वह भी बेख़बर थे; अख़बारों से उन्हें कुछ पता नहीं चलता था और पहरेदार सिपाही अनपढ़ और जाहिल थे, जिनकी वार्तालाप से भी वह कोई नतीजा बरामद नहीं कर सकते थे। उनको सिर्फ इतना मालूम था कि एक आदमी मुहम्मद अली जिन्नाह है जिसको क़ायदे-आज़म कहते हैं; उसने मुसलमानों के लिए एक अलाहदा मुल्क बनाया है जिसका नाम पाकिस्तान है। यह कहां है, इसकी भौगोलिक स्थिति क्या है, इसके बारे में वह कुछ नहीं जानते थे-- यही वजह है कि वह सब पागल जिनका दिमाग पूरी तरह विकृत नहीं हुआ था, इस बखेड़े में गिरफ्तार थे कि वह पाकिस्तान में हैं या हिंदुस्तान में; अगर हिंदुस्तान में हैं तो पाकिस्तान कहां है, अगर पाकिस्तान में हैं तो यह कैसे हो सकता है कि वह कुछ अर्से पहले यहीं रहते हुए हिंदुस्तान में थे।

एक पागल तो हिंदुस्तान, पाकिस्तान और पाकिस्तान के चक्कर में कुछ ऐसा गिरफ्तार हुआ कि और ज़्यादा पागल हो गया। झाड़ू देते-देते वह एक दिन दरख़्त पर चढ़ गया और टहनी पर बैठकर दो घंटे निरंतर तक़रीर करता रहा, जो पाकिस्तान और हिंदुस्तान के नाजुक मसले पर थी... सिपाहियों ने जब उसे नीचे उतरने को कहा तो वह और ऊपर चढ़ गया। जब उसे डराया-धमकाया गया तो उसने कहा: ''मैं न हिंदुस्तान में रहना चाहता हूं न पाकिस्तान में... मैं इस दरख़्त ही पर रहूंगा...।'' बड़ी देर के बाद जब उसका दौरा सर्द पड़ा तो वह नीचे उतरा और अपने हिंदू-सिख दोस्तों से गले मिल-मिलाकर रोने लगा। इस ख़्याल से उसका दिल भर आया था कि वह उसे छोड़कर हिंदुस्तान चले जाएंगे...।

एक एम.एस.सी पास रेडियो इंजीनियर, जो मुसलमान था और दूसरे पागलों से बिलकुल अलग-थलग बाग़ की एक ख़ास पगडंडी पर सारा दिन ख़ामोश टहलता रहता था, में वह तब्दीली प्रकट हुई कि उसने अपने तमाम कपड़े उतारकर दफेदार के हवाले कर दिए और नंग-धड़ंग सारे बाग़ में चलना-फिरना शुरू कर दिया।

चिंयौट के एक मोटे मुसलमान ने, जो मुस्लिम लीग का सरगर्म कारकुन रह चुका था और दिन में पंद्रह-सोलह मर्तबा नहाया करता था, अचानक यह आदत छोड़ दी। उसका नाम मुहम्मद अली था, चुनांचे उसने एक दिन अपने जंगले में एूलान कर दिया कि वह क़ायदे-आज़म मुहम्मद अली जिन्नाह है; उसकी देखा-देखी एक सिख पागल मास्टर तारासिंह बन गया- इससे पहले कि खून-खराबा हो जाए, दोनों को ख़तरनाक पागल क़रार देकर अलहदा-अलहदा बंद कर दिया गया।

लाहौर का एक नौजवान हिंदू वकील मुहब्बत में नाकाम होकर पागल हो गया था; जब उसने सुना कि अमृतसर हिंदुस्तान में चला गया है तो उसे बहुत दुख हुआ। अमृतसर की एक हिंदू लड़की से उसे मुहब्बत थी जिसने उसे ठुकरा दिया था मगर दीवानगी की हालत में भी वह उस लड़की को नहीं भूला था। वह उन तमाम हिंदू और मुसलमान लीडरों को गालियां देने लगा जिन्होंने मिल-मिलाकर हिंदुस्तान के दो टुकड़े कर दिए हैं, और उसकी महबूबा हिंदुस्तानी बन गई है और वह पाकिस्तानी।... जब तबादले की बात शुरू हुई तो उस वकील को कई पागलों ने समझाया कि वह दिल बुरा न करे... उसे हिंदुस्तान भेज दिया जाएगा, उसी हिंदुस्तान में जहां उसकी महबूबा रहती है- मगर वह लाहौर छोड़ना नहीं चाहता था; उसका ख़्याल था कि अमृतसर में उसकी प्रैक्टिस नहीं चलेगी।

यूरोपियन वार्ड में दो एंग्लो-इंडियन पागल थे। उनको जब मालूम हुआ कि हिंदुस्तान को आज़ाद करके अंग्रेज़ चले गए हैं तो उनको बहुत सदमा हुआ; वह छुप-छुपकर घंटों आपस में इस महत्वपूर्ण समस्या पर वार्तालाप करते रहते कि पागलख़ाने में अब उनकी हैसियत किस क़िस्म की होगी; यूरोपियन वार्ड रहेगा या उड़ा दिया जाएगा; ब्रेक-फास्ट मिला करेगा या नहीं; क्या उन्हें डबल रोटी के बजाय ब्लडी इंडियन चपाटी तो ज़हरमार नहीं करनी पड़ेगी?

एक सिख था, जिसे पागलख़ाने में दाख़िल हुए पंद्रह बरस हो चुके

थे। हर वक़्त उसकी ज़बान से यह अजीबो-ग़रीब शब्द सुनने में आते थे: ''औपड़ दि गड़ गड़ दि अनैक्स दि बेधयानां दि मुंग दि दाल आफ दी लालटेन...'' वह न दिन को सोता था ना रात को। पहरेदारों का यह कहना था कि पंद्रह बरस के तवील अर्से में वह एक पल के लिए भी नहीं सोया था; वह लेटता भी नहीं था, अलबत्ता कभी-कभी किसी दीवार के साथ टेक लगा लेता था- हर वक़्त खड़ा रहने से उसके पांव सूज गए थे और पिंडलियां भी फूल गई थीं, मगर जिस्मानी तकलीफ के बावजूद वह लेटकर आराम नहीं करता था।

हिंदुस्तान, पाकिस्तान और पागलों के तबादले के बारे में जब कभी पागलख़ाने में वार्तालाप होती थी तो वह ग़ौर से सुनता था; कोई उससे पूछता कि उसका क्या ख़्याल है तो वह बड़ी संजीदगी से जवाब देता: ''औपड़ दि गड-गड़ दि अनैक्स दि बेघयाना दि मुंग दि दाल आफ दी पाकिस्तान गवर्नमेंट...!'' लेकिन बाद में 'आफ दि पाकिस्तान गवर्नमेंट' की जगह आफ दि टोबा टेकसिंह गवर्नमेंट' ने ले ली, और उसने दूसरे पागलों से पूछना शुरू कर दिया कि टोबा टेकसिंह कहां है, जहां का वह रहने वाला है। किसी को भी मालूम नहीं था कि टोबा टेकसिंह पाकिस्तान में है या हिंदुस्तान में; जो बताने की कोशिश करते थे वह खुद इस उलझाव में गिरफ्तार हो जाते थे कि सियालकोट पहले हिंदुस्तान में होता था, पर अब सुना है कि पाकिस्तान में है... क्या पता है कि लाहौर जो आज पाकिस्तान में है, कल हिंदुस्तान में चला जाए... या सारा हिंदुस्तान ही पाकिस्तान बन जाए और यह भी कौन सीने पर हाथ रखकर कह सकता है कि हिंदुस्तान और पाकिस्तान, दोनों किसी दिन सिरे से ग़ायब ही हो जाएं...।

इस सिख पागल के केश छिदरे होकर बहुत छोटे रह गए थे; चूंकि बहुत कम नहाता था, इसलिए दाढ़ी और सिर के बाल आपस में जम गए थे जिसके कारण उसकी शक्ल बड़ी भयानक हो गई थी। मगर आदमी नुक़सान पहुंचाने वाला नहीं था- पंद्रह बरसों में उसने कभी किसी से झगड़ा-फ़साद नहीं किया था। पागलख़ाने के जो पुराने मुलाज़िम थे, वह उसके बारे में इतना जानते थे कि टोबा टेकसिंह में उसकी बहुत ज़मीन थी; अच्छा खाता-पीता ज़मींदार था कि अचानक दिमाग़ उलट गया, उसके रिश्तेदार उसे लोहे की मोटी-मोटी ज़ंजीरों में बांधकर लाए और पागलख़ाने में दाखिल करा गए।

महीने में एक बार मुलाक़ात के लिए यह लोग आते थे और उसकी

ख़ैर-ख़ैरियत पता करके चले जाते थे; एक मुद्दत तक यह सिलसिला जारी रहा, पर जब पाकिस्तान, हिंदुस्तान की गड़बड़ शुरू हुई तो उनका आना-जाना बंद हो गया।

उसका नाम बिशन सिंह था मगर सब उसे टोबा टेक सिंह कहते थे। उसको यह कदापि मालूम नहीं था कि दिन कौन-सा है, महीना कौन-सा है या कितने साल बीत चुके हैं; लेकिन हर महीने जब उसके सगे-संबंधी उससे मिलने के लिए आने के क़रीब होते तो उसे अपने-आप पता चल जाता; चुनांचि वह दफेदार से कहता कि उसकी मुलाक़ात आ रही है; उस दिन वह अच्छी तरह नहाता, बदन पर खूब साबुन घिसता और बालों में तेल डालकर कंघा करता। अपने वह कपड़े जो वह कभी इस्तेमाल नहीं करता था, निकलवाकर पहनता और यूं सज-बनकर मिलने वालों के पास जाता। वह उससे कुछ पूछते तो वह ख़ामोश रहता या कभी-कभार 'औपड़ दि गड़ गड़ दि अनैक्स दि बेघयानां दि मुंग दि दाल आफ दी लालटेन...' कह देता।

उसकी एक लड़की थी जो हर महीने एक उंगली बढ़ती-बढ़ती पंद्रह बरसों में जवान हो गई थी। बिशन सिंह उसको पहचानता ही नहीं था- वह बच्ची थी जब भी अपने बाप को देखकर रोती थी, जवान हुई तब भी उसकी आंखों से आंसू बहते थे।

पाकिस्तान और हिंदुस्तान का क़िस्सा शुरू हुआ तो उसने दूसरे पागलों से पूछना शुरू किया कि टोबा टेकसिंह कहां है; जब उसे संतोषजनक जवाब न मिला तो उसकी कुरेद दिन-प्रतिदिन बढ़ती गई। अब मुलाक़ात भी नहीं आती थी; पहले तो उसे अपने आप पता चल जाता था कि मिलने वाले आ रहे हैं, पर अब जैसे उसके दिल की आवाज़ भी बंद हो गई थी जो उसे उनके आगमन की ख़बर दे दिया करती थी- उसकी बड़ी इच्छा थी कि वह लोग आएं जो उससे हमदर्दी प्रकट करते थे और उसके लिए फल, मिठाइयां और कपड़े लाते थे। वह आएं तो वह उनसे पूछे कि टोबा टेक सिंह कहां है... वह उसे निसंदेह बता देंगे कि टोबा टेकसिंह पाकिस्तान में हे या हिंदुस्तान में- उसका ख़्याल था कि वह टोबा टेक सिंह ही से आते हैं जहां उसकी ज़मीनें हैं।

पागलख़ाने में एक पागल ऐसा भी था जो खुद को खुदा कहता था। उससे जब एक रोज़ बिशन सिंह ने पूछा कि टोबा टेक सिंह पाकिस्तान में है या हिंदुस्तान में तो उसने स्वभावानुसार क़हक़हा लगाया और कहा: "वह

न पाकिस्तान में है न हिंदुस्तान में, इसलिए कि हमने अभी तक हुक्म ही नहीं दिया...!''

बिशन सिंह ने उस खुदा से कई मर्तबा बड़ी मिन्नत-समाजत से कहा कि वह हुक्म दे दे ताकि झंझट ख़त्म हो, मगर खुदा बहुत मसरूफ था, इसलिए कि उसे और बे-शुमार हुक्म देने थे।

एक दिन तंग आकर बिशन सिंह खुदा पर बरस पड़ा: ''औपड़ दि गड़ गड़ दि अनैक्स दि बेघयानां दि मुंग दि दाल आफ वाहे गुरू जी दा ख़ालसा एंड वाहे गुरू ही दि फ़तह...!'' इसका शायद मतलब था कि तुम मुसलमानों के खुदा हो, सिखों के खुदा होते तो ज़रूर मेरी सुनते।

तबादले से कुछ दिन पहले टोबा टेकसिंह का एक मुसलमान जो बिशन सिंह का दोस्त था, मुलाक़ात के लिए आया; मुसलमान दोस्त पहले कभी नहीं आया था। जब बिशन सिंह ने उसे देखा तो एक तरफ हट गया, फिर वापिस जाने लगा मगर सिपाहियों ने उसे रोका: ''यह तुमसे मिलने आया है... तुम्हारा दोस्त फज़लदीन है...!''

बिशन सिंह ने फ़ज़लदीन को एक नज़र देखा और कुछ बड़बड़ाने लगा।

फ़ज़लदीन ने आगे बढ़कर उसके कंधों पर हाथ रखा: ''मैं बहुत दिनों से सोच रहा था कि तुमसे मिलूं लेकिन फुरसत ही न मिली.. तुम्हारे सब आदमी ख़ैरियत से हिंदुस्तान चले गए थे... मुझसे जितनी मदद हो सकी, मैंने की... तुम्हारी बेटी रूपकौर...'' वह कहते-कहते रूक गया।

बिशन सिंह कुछ याद करने लगा: ''बेटी रूपकौर...''

फ़जलदीन ने रूक-रूककर कहा: ''हां... वह... वह भी ठीक-ठाक है... उनके साथ ही चली गई थी...।''

बिशन सिंह ख़ामोश रहा।

फ़जलदीन ने फिर कहना शुरू किया: ''उन्होंने मुझे कहा था कि तुम्हारी ख़ैर-ख़ैरियत पूछता रहूं... अब मैने सुना है कि तुम हिंदुस्तान जा रहे हो... भाई बलबीर सिंह और भाई बधावा सिंह से मेरा सलाम कहना और बहन अमृतकौर से भी... भाई बलबीर से कहना कि फ़ज़लदीन राज़ी खुशी है... दो भूरी भैंसे जो वह छोड़ गए थे, उनमें से एक ने कट्टा दिया है.. दूसरी के कट्टी हुई थी, पर वह छः दिन की होके मर गई... और... मेरे लायक जो ख़िदमत हो, कहना, मैं हर वक़्त तैयार हूं... और यह तुम्हारे लिए थोड़े से मरूंडे लाया हूं...!''

बिशन सिंह ने मरुंडों की पोटली लेकर पास खड़े सिपाही के हवाले कर दी और फ़ज़लदीन से पूछा: "टोबा टेक सिंह कहां है...?"

फ़ज़लदीन ने क़दरे हैरत से कहा: "कहां है...? वहीं है, जहां था...।"

बिशन सिंह ने फिर पूछा: "पाकिस्तान में है या हिंदुस्तान में...?"

"हिंदुस्तान में... नहीं, नहीं पाकिस्तान में...!" फ़जलदीन बौखला-सा गया।

बिशन सिंह बड़बड़ाता हुआ चला गया। "औपड़ दि गड़ गड़ दि अनैक्स दि बेघयानां दि मुंग दि दाल आफ दी पाकिस्तान एंड हिंदुस्तान आफ दी दुर फिटे मुंह...!"

तबादले की तैयारियां मुकम्मल हो चुकी थीं, इधर से उधर आनेवाले पागलों की सुचियां पहुंच चुकी थीं और तबादले का दिन भी निश्चित हो चुका था।

सख़्त सर्दियां थीं जब लाहौर के पागलख़ाने से हिंदू-सिख पागलों से भरी हुई लारियां पुलिस के सुरक्षा दस्ते के साथ रवाना हुईं, संबंधित अफसर भी साथ थे- वागह के बार्डर पर दोनों तरफ के सुपरिंटेंडेंट एक-दूसरे से मिले और आरंभिक कार्रवाई ख़त्म होने के बाद तबादला शुरू हो गया, जो रात-भर जारी रहा।

पागलों को लारियों से निकालना और उनको दूसरे अफ़सरों के हवाले करना बड़ा कठिन काम था; बाज़ तो बाहर निकलते ही नहीं थे, जो निकलने पर राज़ी होते थे, उनको संभालना मुश्किल हो जाता था, क्योंकि वह इधर-उधर भाग उठते थे; जो नंगे थे, उनको कपड़े पहनाए जाते तो वह उन्हें फाड़कर अपने तन से जुदा कर देते। कोई गालियां बक रहा है... कोई गा रहा है... कुछ आपस में झगड़ रहे हैं... कुछ रो रहे हैं, बिलख रहे हैं- कान पड़ी आवाज़ सुनाई नहीं देती थी- पागल औरतों का शोरगुल अलग था, और सर्दी इतनी कड़ाके की थी कि दांत से दांत बज रहे थे।

पागलों का बहुमत इस तबादले के हक़ में नहीं था, इसलिए कि उनकी समझ में नही आ रहा था कि उन्हें अपनी जगह से उखाड़कर कहां फेंका जा रहा है; वह चंद पागल जो कुछ सोच-समझ सकते थे, पाकिस्तान: ज़िन्दाबाद' और 'पाकिस्तान: मुर्दाबाद' के नारे लगा रहे थे; दो-तीन बार फ़साद होते-होते बचा, क्योंकि बाज़ मुसलमानों और सिखों को यह नारे सुनकर तैश आ गया था।

जब बिशन सिंह की बारी आई और वागह के उस पार का संबंधित अफसर उसका नाम रजिस्टर में दर्ज करने लगा तो उसने पूछा: ''टोबा टेक सिंह कहां है... पाकिस्तान में या हिंदुस्तान में...?''

संबंधित अफ़सर हंसा: ''पाकिस्तान में...!''

यह सुनकर बिशन सिंह उछलकर एक तरफ हटा और दौड़कर अपने बाक़ी बचे साथियों के पास पहुंच गया।

पाकिस्तानी सिपाहियों ने उसे पकड़ लिया और दूसरी तरफ ले जाने लगे, मगर उसने चलने से इनकार कर दिया: ''टोबा टेक सिंह यहां है...!'' और ज़ोर-ज़ोर से चिल्लाने लगा: ''औपड़ दि गड़ गड़ दि अनैक्स दि बेघयानां दि मुंग दि दाल आफ दी टोबा टेक सिंह एंड पाकिस्तान...!''

उसे बहुत समझाया गया कि देखो, अब टोबा टेक सिंह हिंदुस्तान में चला गया है... अगर नहीं आया है तो उसे फौरन वहां भेज दिया जाएगा, मगर वह न माना। जब उसको जबर्दस्ती दूसरी तरफ ले जाने की कोशिश की गई तो वह दरमियान में एक जगह इस अंदाज़ में अपनी सूजी हुई टांगों पर खड़ा हो गया जैसे अब उसे कोई ताक़त नहीं हिला सकेगी... आदमी चूंकि हानि पहुंचाने वाला ना था, इसलिए उससे और अधिक जबर्दस्ती न की गई; उसको वहीं खड़ा रहने दिया गया, और तबादले का बाक़ी काम होता रहा।

सूरज निकलने से पहले संज्ञाहीन-जड़वत् बिशन सिंह के हलक से एक आकाश-भेदी चीख़ निकली।

इधर-उधर से कई अफसर दौड़े आए और उन्होंने देखा कि वह आदमी जो पंद्रह बरस तक दिन-रात अपनी टांगों पर खड़ा रहा था, औंधे मुंह लेटा है- उधर ख़ारदार तारों के पीछे हिंदुस्तान था, इधर वैसे ही तारों के पीछे पाकिस्तान; दरमियान में ज़मीन के उस टुकड़े पर जिसका कोई नाम नहीं था, टोबा टेक सिंह पड़ा था।

दौदा पहलवान

स्कूल में पढ़ता था तो वो शहर का हसीन तरीन लड़का समझ जाता था। उस को लेकर बड़े-बड़े 'अमरदपरस्तों' के दर्मियान बड़ी ख़ूनख़ार लड़ाईयां हुईं। एक दो इसी सिलसिले में मारे भी गए।

वो वाक़ई हसीन था। बड़े मालदार घराने का चश्मो-चिराग़ था। इसलिए उसको किसी चीज़ की कमी नहीं थी। मगर जिस मैदान में वो कूद पड़ा था उसको एक मुहाफ़िज़ की ज़रूरत थी। जो वक़्त पर उसके काम आ सके। शहर में यों तो सैंकड़ों बदमाश और गुंडे मौजूद थे जो हसीना-जमील सलाहू के एक इशारे पर कट मरने को तैयार थे, मगर दौदा पहलवान में एक निराली बात थी। वो बहुत मुफ़्लिस था, बहुत बदमिज़ाज और अक्खड़ तबीयत का था। मगर इसके बावजूद उसमें ऐसा बांकपन था कि सलाहू ने उसको देखते ही पसंद कर लिया और उनकी दोस्ती हो गई।

सलाहू को दौदा पहलवान की रफ़ाक़त से बहुत फ़ायदे हुए। शहर के दूसरे गुंडे जो सलाहू के रास्ते में रुकावटें पैदा करने का कारण हो सकते थे, दौदा के कारण ख़ामोश रहे। स्कूल से निकल कर सलाहू कालेज में दाख़िल हुआ तो उसने और पर पुर्ज़े निकाले और थोड़े अर्से में उसकी सरगर्मियां नया रुख़ इख़्तियार कर गईं। इसके बाद खुदा का करना ऐसा हुआ कि सलाहू का बाप मर गया। अब वो उसकी तमाम जायदाद, इम्लाक का अकेला मालिक था। पहले तो उसने नक़दी पर हाथ साफ किया। फिर मकान गिरवी रखने शुरू किए। जब दो मकान बिक गए तो हीरामंडी की तमाम तवाइफें सलाहू के नाम से वाक़िफ़ थीं। मालूम नहीं इसमें कहां तक सदाक़त है। लेकिन लोग कहते हैं कि हीरामंडी में बूढ़ी नायिकाएं अपनी

जवान बेटियों को सलाहू की नज़रों से छुपा-छुपा कर रखती थीं, ताकि वो उसके हुस्न के चक्कर में फंस जाऐं। लेकिन इन एहतियाती तदाबीर के बावजूद जैसा कि सुनने में आया है, कई कुंवारी तवाइफ़ ज़दियां उसके इश्क़ में गिरफ्तार हुईं और उल्टे मार्ग पर चल कर अपनी ज़िन्दगी के सुनहरे दिन उसके 'इश्क़' की नज़र कर बैठीं।

सलाहू खुल कर खेल रहा था। दौदा को मालूम था कि यह खेल देर तक जारी नहीं रहेगा। वो उम्र में सलाहू से दोगुना बड़ा था। उसने हीरामंडी में बड़े-बड़े सेठों की ख़ाक उड़ते देखी थी। वो जानता था कि हीरामंडी एक ऐसा अंधा कुआं है जिसको दुनिया भर के सेठ मिल कर भी अपनी दौलत से नहीं भर सकते। मगर वो उसको कोई नसीहत न देता था। शायद इसलिए कि वो जहांदीदा होने के कारण अच्छी तरह समझता था कि जो भूत उसके हसीनो-जमील बाबू के सर पर सवार है, उसे कोई टोना-टोटका उतार नहीं सकता।

दौदा पहलवान हर वक़्त सलाहू के साथ होता था। शुरू-शुरू में जब सलाहू ने हीरामंडी का रुख़ किया तो उसका ख़्याल था कि दौदा भी उसके ऐश में शरीक होगा मगर आहिस्ता-आहिस्ता उसे मालूम हुआ कि उसको इस क़िस्म के ऐश को कोई दिलचस्पी नहीं थी जिसमें वो दिन रात डूबा रहता था। वो गाना सुनता था, शराब पीता था। तवाइफों से गंदा मज़ाक़ भी करता था। मगर इस से आगे कभी नहीं गया था। उसका बाबू रात-रात भर अन्दर किसी माशूक़ को बग़ल में दबाए पड़ा रहता और वो बाहर किसी पहरेदार की तरह जागता रहता।

लोग समझते थे कि दौदा ने अपना घर भर लिया है। दौलत की लूट मची है। इसमें उसने अपने हाथ रंगे हैं। इसमें कोई शक नहीं कि जब सलाहू दाद-ऐश देने को निकलता था तो हज़ारों नोट दौदा ही की तहवील में होते थे। मगर यह सिर्फ उसी को मालूम था कि पहलवान ने उनमें से एक पाई भी कभी इधर-उधर नहीं की। उसको सिर्फ सलाहू से दिलचस्पी थी, जिसको वो अपना आक़ा समझता था और ये लोग भी जानते थे कि दौदा किस हद तक उसका गुलाम है। सलाहू उसको डांट-डपट लेटा था। बाज़ अवक़ात शराब के नशे में उसे मारपीट भी लेता था मगर वो ख़ामोश रहता। हसीनो-जमील सलाहू उसका माबूद था। वो उसके हुज़ूर कोई गुस्ताख़ी नहीं कर सकता था।

एक दिन इत्तेफाक़ से दौदा बीमार था। सलाहू रात को नियमानुसार

ऐश करने के लिए हीरामंडी पहुंचा। वहां किसी तवाइफ के कोठे पर गाना सुनने के दौरान में उसकी झड़प एक तमाशबीन से हो गई और हाथा पाई में उसके माथे पर हल्की सी ख़राश आ गई। दौदा को जब इसका पता चला तो उसने दीवार के साथ टक्करें मार-मार कर अपना सारा सर ज़ख़्मी कर लिया। ख़ुद को बेशुमार गालियां दीं। बहुत बुरा भला कहा। उस को इतना अफ़्सोस हुआ कि दस पन्द्रह दिन तक सलाहू के सामने उसका सर झुका रहा। एक लफ़्ज़ भी उसके मुंह से न निकला। उसको यह महसूस होता था कि उस से कोई बहुत बड़ा गुनाह सरज़द हो गया है। चुनांचि लोगों का बयान है कि वो बहुत देर तक नमाज़ें पढ़-पढ़कर अपने दिल का बोझ हल्का करता रहा।

सलाहू की वो इस तरह ख़िदमत करता था जिस तरह पुराने क़िस्से कहानियों के वफ़ादार नौकर करते हैं। वो उसके जूते पॉलिश करता था। उसके पांव दाबता था। उसके चमकीले बदन पर मालिश करता था। उसके हर आराम और आसाइश का ख़्याल रखता था। जैसे उसके बतन से पैदा हुआ है।

कभी-कभी सलाहू नाराज़ हो जाता। ये वक़्त दौदा पहलवान के लिए बड़ी आज़माइश का वक़्त होता था। दुनिया से बेज़ार हो जाता। फ़क़ीरों के पास जाकर तावीज़ गंडे लेता। ख़ुद को तरह-तरह की जिस्मानी तकलीफ़ पहुंचाता। आख़िर जब सलाहू मौज में आकर उसे बुलाता तो उसे ऐसा महसूस होता कि दोनों जहान मिल गए हैं। दौदा को अपनी ताक़त पर नाज़ नहीं था, उसे यह भी घमंड नहीं था कि वो छुरी मारने के फ़न में पक्का है। उसको अपनी ईमानदारी और अपने ख़लूस पर भी कोई गर्व नहीं था। लेकिन वो अपनी इस बात पर बहुत नाज़ां था कि लंगोट का पक्का है। वो अपने दोस्तों, प्यारों को बड़े फ़ख़्रो इम्तहाज से बताया करता था कि उसकी जवानी में सैंकड़ों मर्दमार औरतें आईं। मगर वो-- शाबाश है उसके उस्ताद को, लंगोट का पक्का रहा।

ये बड़ नहीं थी। उन लोगों को जो दौदा पहलवान के लगोंटिये थे। अच्छी तरह मालूम था कि उसका दामन औरत की तमाम गंदगियों से पाक है। कई बार कोकिश की गई कि वो गुमराह हो जाए मगर नाकामी हुई। वो अपनी जगह अटल रहा।

ख़ुद सलाहू ने कई बार उसका इम्तेहान लिया। अजमेर के उर्स पर उसने मेरठ की एक काफ़िर अदा तवाइफ अनवरी को इस बात पर आमादा

किया कि वो दौदा पहलवान पर डोरे डाले। उसने अपने तमाम गुर इस्तेमाल कर डाले मगर दौदा पर कोई असर न हुआ। उर्स ख़त्म होने पर जब वो लाहौर रवाना हुए तो गाड़ी में उसने सलाहू से कहा: ''बाउ! बस अब मेरा कोई और इम्तेहान न लेना। यह साली अनवरी बहुत आगे बढ़ गई थी। तुम्हारा ख़्याल था वर्ना गला घोंट देता हरामज़ादी का।''

इसके बाद सलाहू ने उसका कोई इम्तेहान न लिया। दौदा के ये तंबीही अल्फाज़ काफी थे जो उसने बड़े संगीन लहजे में अदा किए थे।

सलाहू ऐशो-इशरत में बदस्तूर ग़र्क़ था। इसलिए कि अभी तीन चार मकान वाक़ी थे। हीरामंडी की तमाम उल्लेखनीय तवाइफें एक-एक कर के उसके पहलू में आ चुकी थीं। अब उसने छोटे जामों का दौर शुरू कर दिया था। इसी दौरान में एकदम जाने कहां से एक तवाइफ अलमास पैदा हो गई जो एकदम सारी हीरामंडी पर छा गई। देखा किसी ने भी नहीं था मगर इसके बावजूद उसके हुस्ने के चर्चे आम थे। हाथ लगाये मैली होती है। पानी पीती है तो उसके शफ़ाफ़ हलक़ में से नज़र आता है। हिरणी की सी आंखें हैं जिनमें ख़ुदा ने अपने हाथ से सुर्मा लगाया है। बदन ऐसा मुलायम है कि निगाहें फिसल-फिसल जाती हैं। सलाहू जहां भी था, उस परी चेहरा और हूर शमायल माशूक़ा के हुस्नो-जमाल की बातें सुनता था।

दौदा पहलवान ने फ़ौरन पता लगाया और अपने बाबू को बताया कि यह अल्मास कश्मीर से आई है। वाक़ई खूबसूरत है, अधेड़ उम्र की मां के साथ है जो उस पर बहुत कड़ी निगरानी रखती है। इसलिए कि वो लाखों के ख़्वाब देख रही है।

जब अल्मास का मुजरा शुरू हुआ तो उसके कोठे पर सिर्फ वही साहबे सरवत जाते थे। जिनका लाखों का कारोबार था। सलाहू के पास अब इतनी दौलत नहीं थी कि वो इन तिकड़े दौलतमन्द ऐयाशों का मुक़ाबला ख़म ठोंक के कर सके। आठ दस मुजरों ही में उसकी हजामत हो जाती। चुनांचि वो इसी ख़्याल के तहत ख़ामोश रहा और पेंचो-ताब खाता रहा। दौदा पहलवान अपने बाबू की ये बेचारगी देखता तो उसे बहुत दुख होता। मगर वो क्या कर सकता था। उसके पास था ही किया। एक सिर्फ उसकी जान थी मगर वो इस मामले में क्या काम दे सकती थी। बहुत सोच विचार के बाद आख़िर दौदा ने एक तर्कीब सोची जो यह थी कि सलाहू, अल्मास की मां इक़बाल से राब्ता पैदा करे। इस पर यह ज़ाहिर करे कि वो उसके इश्क़ में गिरफ्तार हो गया है। इस तरह जब मौक़ा मिले तो अल्मास को

अपने कब्ज़े में कर ले।

सलाहू को यह तर्कीब पसन्द आई। चुनांचि फौरन इस पर अमल दर आमद शुरू हो गया। इक़बाल बहुत खुश हुई कि उसकी ढलती उम्र में उसे सलाहू जैसा खूबसूरत चाहने वाला मिल गया। यह सिलसिला देर तक जारी रहा। इस दौरान में सैंकड़ों मर्तबा अल्मास सलाहू के सामने आई। बाज़ औक़ात उसके पास बैठ कर बातें भी करती रही और उसके हुस्न से काफी प्रभावित हुई। उसको हैरत थी कि वो उसकी मां से क्यों दिलचस्पी ले रहा है। जबकि वो उसकी आंखों के सामने मौजूद है। लेकिन उसकी यह हैरत बहुत देर तक क़ायम नहीं रही। जब उसको सलाहू की हरकतों से मालूम हो गया कि वो चाल चल रहा है। यह जान कर उसे खुशी हुई। अंदरूनी तौर पर उसके एहसासे-जवानी को बड़ी ठेस पहुंच रही थी।

बातों-बातों में एक दिन सलाहू का ज़िक्र आया तो अल्मास ने उसकी खूबसूरती की तारीफ़ ज़रा चटख़ारे के साथ बयान की जो उसकी मां इक़बाल को बहुत नागवार मालूम हुई। चुनांचि उन दोनों में खूब बकझक हुआ। अल्मास ने अपनी मां से साफ-साफ कह दिया कि सलाहू उसे मूर्ख बना रहा है। इक़बाल को बहुत दुख हुआ। यहां अब बेटी का सवाल नहीं था। बल्कि रक़ीब का या सौत का। चुनांचे दूसरे रोज़ जब सलाहू आया तो उसने सब से पहले उस से पूछा: "आप किसे पसंद करते हैं, मुझे या मेरी बेटी अल्मास को?"

सलाहू अजब मख़्मसे में गिरफ़्तार हो गया। सवाल बड़ा टेढ़ा था। थोड़ी देर सोचने के बाद उसको बिल आख़िर यही कहना पड़ा "तुम्हें, मैं तो सिर्फ तुम्हें पसंद करता हूं" और फिर उसे इक़बाल को मज़ीद यक़ीन दिलाने के लिए और बहुत सी बातें घड़ना पड़ीं। इक़बाल यों तो बड़ी चालाक थी मगर उसको किसी हद तक यक़ीन आ ही गया। शायद इसलिए कि वो अपनी उम्र के ऐसे मोड़ पर पहुंच चुकी थी जहां उसे चन्द झूठी बातों को भी सच्चा समझना ही पड़ता था।

जब यह बात अल्मास तक पहुंची तो वो बहुत असमंजस में हुई। ज़्यों ही उसे मौक़ा मिला, उसने सलाहू को पकड़ लिया और उस से सच उगलवाने की कोशिश की। सलाहू ज़्यादा देर तक उसकी जिरह बर्दाश्त न कर सका। आख़िर उसे मानना ही पड़ा कि उसे इक़बाल से कोई दिलचस्पी नहीं। असल में तो अल्मास का प्रेम ही उसके पेश नज़र है।

यह क़बूलवाने पर अल्मास की तसल्ली हो गई, मगर वो लगाव जो

उसके दिलो दिमाग़ में सलाहू के सिलसिले में पैदा हुआ था, ग़ायब हो गया और उसने ठेठ तवाइफ़ बन कर अपनी मां को समझाया कि बचपना छोड़ो और उस से मेरे दाम वसूल करो, तुम्हें वो क्या देगा। अपनी लड़की के ये अक़्ल वाली बात इक़बाल की समझ में आ गई और वो सलाहू को दूसरी नज़र से देखने लगी।

सलाहू भी समझ गया कि उसका वार ख़ाली गया। अब इसके सिवा और कोई चारा नहीं था कि वो नीलाम में अल्मास की सब से बढ़ कर बोली दे। दौदा पहलवान ने इधर-उधर से कुरेद कर मालूम किया कि अल्मास की नथनी उतर सकती है अगर पच्चीस हज़ार रूपये उसकी मां के क़दमों में ढेर कर दे।

सलाहू अब पूरी तरह जकड़ा जा चुका था। 'जाए रफ्तन न पाए मानदन' वाला मामला था। उसने दो मकान बेचे और पच्चीस हज़ार रूपये हासिल कर के इक़बाल के पास पहुंचा। उसका ख़्याल था कि वो इतनी रक़म पैदा नहीं कर सकेगा। जब वो ले आया, तो वो बौखला सी गई। अल्मास से मश्वरा किया तो उसने कहा इतनी जल्दी कोई फैसला नहीं करना चाहिए। पहले उस से कहो कि हमारे साथ कलेर शरीफ़ के उर्स पर चले। सलाहू को जाना पड़ा और नतीजा इसका यह हुआ कि पूरे पन्द्रह हज़ार रूपये मुजरों में उड़ गये। उसकी उन तमाश बीनों पर जो उर्स में शरीक हुए थे, धाक तो बैठ गई मगर उसके पच्चीस हज़ार रूपयों को दीमक लग गई। वापस आए तो बाक़ी का रूपया आहिस्ता-आहिस्ता अल्मास की फ़रमाइशों की नज़र हो गया। दौदा अन्दर ही अन्दर गुस्से से खौल रहा था। उसका जी चाहता था कि इक़बाल और अल्मास, दोनों का सर उड़ा दे। मगर उसे अपने बाबू का ख़्याल था। उसके दिल में बहुत सी बातें थीं जो सलाहू को बताना चाहता था। मगर बता नहीं सकता था। इससे उसे और भी झुंझलाहट होती थी। सलाहू बहुत बुरी तरह अल्मास पर लट्टू था। पच्चीस हज़ार रूपये ठिकाने लग चुके थे। अब वो दस हज़ार रूपये उस मकान को गिरवी रखकर उजाड़ रहा था जिसमें उसकी नेक सीरत मां रहती थी। ये रूपया कब तक उसका साथ देता। इक़बाल और अल्मास दोनों जोंक की तरह चिमटी हुई थीं। आख़िर वो दिन भी आ गया जब उस पर नालिश हुई और अदालत ने कुर्की का हुक्म दे दिया।

सलाहू बहुत परेशान हुआ, उसे कोई सूरत नज़र नहीं आती थी। कोई ऐसा आदमी नहीं था जो उसे क़र्ज देता। ले दे के एक मकान था, सो वो

भी गिरवी था और कुर्की आई हुई थी, और मामले सिर्फ दौदा पहलवान की वजह से रूके हुए थे। जिसने उनको यक़ीन दिलाया था कि वो बहुत जल्द रूपयों का बंदोबस्त कर देगा।

सलाहू बहुत हंसा था कि वो कहां से रूपये का बंदोबस्त करेगा। सौ दो सौ रूपये की बात होती तो उसे यक़ीन आ जाता। मगर सवाल पूरे दस हज़ार रूपये का था। चुनांचि उसने पहलवान का बड़ी बेदर्दी से मज़ाक़ उड़ाया था कि वो उसको बच्चों जैसी तसल्लियां दे रहा है। पहलवान ने यह लान-तान ख़ामोशी से बर्दाश्त की और चला गया। दूसरे रोज़ आया तो उसका चेहरा ज़र्द था। ऐसा मालूम होता था कि वो बिस्तर अलालत पर से उठ कर आया है। सर न्योढ़ा कर उसने अपने डब में से रूमाल निकाला जिसमें सौ-सौ के कई नोट थे, और सलाहू से कहा: ''ले बाउ--ले आया हूं।''

सलाहू ने नोट गिने। पूरे दस हज़ार थे। टुकुर-टुकुर पहलवान का मुंह देखने लगा।

''यह रूपया कहां से पैदा किया तुमने?''

दौदा ने उदास लहजे में जवाब दिया: ''हो गया पैदा कहीं से।''

सलाहू कुर्की को भूल गया। इतने सारे नोट देखे तो उसके क़दम फिर अल्मास के कोठे की तरफ उठने लगे। मगर पहलवान ने उसे रोका।

''नहीं बाउ!-- अल्मास के पास न जाओ। यह रूपया कुर्की वालों को दे दो।''

सलाहू ने बिगड़े हुए बच्चे की मानिन्द कहा: '' क्यों?... मैं जाऊंगा अल्मास के पास।''

दौदा ने कड़े लहजे में कहा: ''तू नहीं जाएगा।''

सलाहू तैश में आ गया: ''तू कौन होता है मुझे रोकने वाला।''

दौदा की आवाज़ नर्म हो गई। ''मैं तेरा गुलाम हूं बाउ-- पर अब अल्मास के पास जाने का कोई फ़ायदा नहीं।''

दौदा की आवाज़ में लर्ज़िश पैदा हो गई: ''न पूछ बाउ। ये रूपया मुझे उसी ने दिया है।''

सलाहू क़रीब-क़रीब चीख़ उठा: ''ये रूपया अल्मास ने दिया है-- तुम्हें दिया है?''

''हां बाउ। उसी ने दिया है। मुझ पर बहुत देर से मरती थी साली, पर मैं उसके हाथ नहीं आता था। तुझ पर तकलीफ़ का वक़्त आया तो मेरे दिल

ने कहा "दौदा छोड़ अपनी क़सम को। तेरा बाउ तुझ से कुर्बानी मांगता है। सो मैं कल रात उसके पास गया और--- और-- और उस से सौदा कर लिया।"

दौदा की आंखों से आंसू गिरने लगे।

मिस माला

गाना लिखने वाला अज़ीम गोबिन्दपुरी जब ए.बी.सी प्रोडक्शंज में मुलाज़िम हुआ तो उसने फौरन अपने दोस्त म्यूज़िक डायरेक्टर भटसावे के सम्बंध सोचा जो मराठी था और अज़ीम के साथ कई फिल्मों में काम कर चुका था। अज़ीम उनकी क़ाबिलियत को जानता था। स्टंट फिल्मों में आदमी अपने जौहर क्या दिखा सकता है, बेचारा गुमनामी के गोशे में पड़ा था।

अज़ीम ने चुनांचि अपने सेठ से बात की और कुछ इस अंदाज में की कि उसने भटसावे को बुलाया और उसके साथ एक फिल्म का कंट्रेक्ट तीन हज़ार रूपयों में कर लिया। कंट्रेक्ट पर दस्तख़त करते ही उसे पांच सौ रूपये मिले जो उसने अपने क़र्ज़ख़्वाहों को अदा कर दिए। अज़ीम गोविन्दपुरी का वो बड़ा शुक्रगुज़ार था। चाहता था कि उसकी कोई ख़िदमत करे, मगर उसने सोचा आदमी बेहद शरीफ है और बेग़र्ज़-- कोई बात नहीं। आइन्दा महीने सही। क्योंकि हर माह उसे पांच सौ रूपये कंट्रेक्ट के रू से मिलने थे। उसने अज़ीम से कुछ न कहा। दोनों अपने-अपने काम में मशगूल थे।

अज़ीम ने दस गाने लिखे। जिनमें से सेठ ने चार पसंद किए। भटसावे ने संगीत के लिहाज़ से सिर्फ दो। इनकी उसने अज़ीम के सहयोग से धुनें तैयार कीं जो बहुत पसंद की गईं।

पन्द्रह-बीस रोज़ तक रिहर्सल होती रहीं। फिल्म का पहला गाना कोरस था। इसके लिए कम अज़ कम दस गवैया लड़कियां दरकार थीं। प्रोडक्शन मनेजर से कहा गया। मगर जब वो इंतज़ाम न कर सका तो भटसावे ने मिस माला को बुलाया। जिसकी अच्छी आवाज़ थी। इसके इलावा वो पांच छः और लड़कियों को जानती थी जो सुर में गा लेती थीं।

मिस माला खांडेकर जैसा कि उसके नाम से ज़ाहिर है कोल्हापुर की मराठी थीं। दूसरों के मुक़ाबले में उसका उर्दू का तलफ्फुज़ ज़्यादा साफ था। उसको यह ज़बान बोलने का शौक़ था। उम्र की ज़्यादा बड़ी नहीं थी। लेकिन उसके चेहरे का हर ख़दोखाल अपनी जगह पर पुख़्ता। बातें भी इस अंदाज़ में करती कि मालूम होता अच्छी ख़ासी उम्र की है, ज़िन्दगी के उतार चढ़ाव से बाख़बर है। स्टूडियो के हर कारकुन को भाईजान कहती और हर आने वाले से बहुत जल्द घुलमिल जाती थी।

उसको जब भटसावे ने बुलाया तो वो बहुत खुश हुई। उसके ज़िम्मे यह काम सपुर्द किया गया कि वो फौरन कोरस के लिए दस गाने वाली लड़कियां मुहैया कर दे। वो दूसरे रोज़ ही बारह लड़कियां ले आई। भटसावे ने उसका टेस्ट लिया। सात काम की निकलीं। बाक़ी रूख़्सत कर दी गईं। उसने सोचा कि चलो ठीक है, सात ही काफी हैं। जगताप साउण्ड रिकार्डिस्ट से मश्वरा लिया। उसने कहा मैं सब ठीक कर लूंगा। ऐसी रिकार्डिंग करूंगा कि लोगों को ऐसा मालूम होगा कि बीस लड़कियां गा रही हैं।

जगताप अपने फ़न को समझता था। चुनांचि उसने रेकार्डिंग के लिए साउण्डप्रूफ कमरे के बजाये साज़िन्दों और गाने वालियों को एक ऐसे कमरे में बैठाया जिसकी दीवारें सख़्त थीं। जिन पर ऐसा कोई ग़िलाफ़ नहीं चढ़ा हुआ था कि आवाज़ दब जाये। फ़िल्म ''बेवफ़ा'' का महूरत उसी कोरस से हुआ। सैंकड़ों आदमी आए। इनमें बड़े-बड़े फिल्मी सेठ और डिस्ट्रीब्यूटर थे। ए.बी.सी प्रोडक्शन के मालिक ने बड़ा आयोजन किया हुआ था।

पहले गाने की दो-चार रिहर्सलें हुईं। मिस माला खंडेकर ने भटसावे के साथ पुरा सहयोग किया। सात लड़कियों को अलग-अलग ख़बर की कि ख़बरदार रहें और कोई नुक्स पैदा न होने दें। भटसावे पहली ही रिहर्सल से संतुष्ट था। लेकिन उसने और संतुष्टि के लिए चन्द और रिहर्सलें करायें। इसके बाद जगंताप से कहा कि वो संतुष्टि कर ले। उसने जब साउंड ट्रैक में यह कोरस पहली मर्तबा हेड फोन लगा कर सुना तो उसने खुश हो के बहुत ऊंचा ''ओके'' कह दिया। हर साज़ और हर आवाज़ अपने सही क़याम पर थी।

मेहमानों के लिए माइक्रोफोन का इन्तेज़ाम कर दिया गया था। रेकार्डिंग शुरू हुई तो उसे ओन कर दिया गया। भटसावे की आवाज़ भोंपू से निकली ''सोंग नम्बर एक-ट्रैक फर्स्ट, रेडी वन टू।''

और कोरस शुरू हो गया।

बहुत अच्छी कम्पोज़ीशन थी। सात लड़कियों में से किसी एक ने भी कहीं ग़लत सुर न लगाया। मेहमान बहुत आनंदित थे। सेठ, जो मौसीक़ी क्या होती है उससे भी बिलकुल अंजान था, बहुत खुश हुआ। इसलिए कि सारे मेहमान इस कोरस की तारीफ़ कर रहे थे। भटसावे ने साज़िन्दों और गाने वालियों को शाबाशियां दीं। ख़ास तौर पर उसने मिस माला का शुक्रिया अदा किया जिसने उसको इतनी जल्दी गाने वालियां फराहम कर दीं। इसके बाद वो जगताप साउंड रिकार्डिस्ट से गले मिल रहा था कि ए.बी.सी प्रोडक्शंज के मालिक सेठ रंछोड़ दास का आदमी आया कि वो उसे बुला रहे हैं। अज़ीम गोबिंदपुरी को भी।

दोनों भागे, स्टूडियो के उस सिरे पर गये जहां महफ़िल जमी थी। सेठ साहब ने सब मेहमानों के सामने एक सौ रूपये का सब्ज़ नोट इनाम के तौर पर पहले भटसावे को दिया। फिर दूसरा अज़ीम गोबिन्दपुरी को। वो मुख़्तसर सा बाग़ीचा जिसमें मेहमान बैठे थे, तालियों की आवाज़ से गूंज उठा।

जब महूरत की यह महफ़िल बरख़ास्त हुई तो भटसावे ने अज़ीम से कहा: ''माल पानी है, चलो आउट डोर चलें।

भटसावे मुस्कुराया: ''माज़े मलगे (मेरे लड़के) मोज़ शौक (मौज शौक़) से करने जाएंगे। सौ रूपया तुम्हारे पास है, सौ हमारे पास... चलो।''

अज़ीम समझ गया। लेकिन वो इस मोज़ शौक (मौज शौक़) से डरता था। इसकी बीवी थी, दो छोटे बच्चे बच्चे भी। उसने कभी ऐयाशी न की थी मगर उस वक़्त वो खुश था। उसने अपने दिल से कहा '' चलो रे-- देखेंगे क्या होता है।''

भटसावे ने फौरन टैकसी मंगवाई। दोनों उसमें बैठे और ग्रांट रोड पहुंचे। अज़ीम ने पूछा: ''हम कहां जा रहे हैं, भटसावे!'' वो मुस्कुराया: अपनी मौसी के घर।''

और जब वो अपनी मौसी के घर पहुंचे तो मिस माला खांडेकर का घर था। वो इन दोनों से बड़े तपाक के साथ मिली। उनहें अन्दर अपने कमरे में ले गई। होटल से चाय मंगवाकर पिलाई। भटसावे ने उस से चाय पीने के बाद कहा: ''हम मोज़ शौक़ के लिए निकले हैं। तुम्हारे पास-- तुम हमारा कोई बन्दोबस्त करो।''

माला समझ गई। वो भटसावे की एहसानमंद थी। इसलिए उसने फौरन मराठी ज़बान में कहा जिसका यह मतलब था कि मैं हर ख़िदमत के लिए

तैयार हूं। दरअसल भटसावे, अज़ीम को खुश करना चाहता था। इसलिए कि उसने उसको मुलाज़मत दिलवाई थी। चुनांचि भटसावे ने माला से कहा कि वो एक लड़की मुहैया कर दे।

मिस माला ने अपना मेकअप जल्दी-जल्दी ठीक किया और तैयार हो गई। सब टैक्सी में बैठे। पहले मिस माला अपने बैक सिंगर शांता करनाकरण के घर गई। मगर वो किसी और के साथ बाहर जा चुकी थी। फिर वो अनुसूया के यहां गई मगर वो इस क़ाबिल नहीं थी कि उसके साथ इस मुहिम पर जा सके।

मिस माला को बहुत अफ़्सोस हुआ कि उसे दो जगह नाउमीदी का सामना करना पड़ा। लेकिन उसको उमीद थी कि मामला हो जाएगा। चुनांचि टैक्सी गोलपेठा की तरफ लपकी। वहां कृष्णा थी। पन्द्रह-सोलह बरस की गुजराती लड़की। बड़ी नर्मो-नाज़ुक सुर में गाती थी। माला उसके घर में दाखिल हुई और कुछ क्षण के बाद उसको साथ लेकर बाहर निकल आई। भटसावे को उसने हाथ जोड़ कर नमस्कार किया और अज़ीम को भी। माला ने ठेठ दलालों के से अंदाज़ में अज़ीम को आंख मारी और गोया ख़मोश ज़बान में उससे कहा, ''यह आपके लिए है।''

भटसावे ने उस पर निगाहों ही निगाहों में ''साद'' कर दिया। कृष्णा, अज़ीम गोबिन्दपुरी के पास बैठ गई। चूंकि उसको माला ने सब कुछ बता दिया था, इसलिए वो उस से चूहलें करने लगीं। अज़ीम लड़कियों का सा हिजाब महसूस कर रहा था। भटसावे को उसकी तबीयत का इल्म था। इसलिए उसने टैक्सी एक 'बार' के सामने ठहराई। सिर्फ अज़ीम को अपने साथ अन्दर ले गया। नग़मा निगार ने सिर्फ एक दो मर्तबा पी थी, वो भी कारोबारी सिलसिले में, यह भी कारोबारी सिलसिला था। चुनांचि उसने भटसावे के ज़िद करने पर दो पैग रम के पिए और उसको नशा हो गया। भटसावे ने एक बोतल ख़रीद कर अपने साथ रख ली। अब वो फिर टैक्सी में थे।

अज़ीम को इस बात का ज़रा भी इल्म नहीं था कि उसका दोस्त भटसावे दो ग्लास और सोडे की बोतलें भी साथ ले आया है।

अज़ीम को बाद में मालूम हुआ कि भटसावे प्लेबैक सिंगर कृष्णा की मां से यह कह आया था कि जो कोरस दिन में लिया गया था, इसके जितने टेक थे, सब ख़राब निकले हैं इसलिए रात को फिर रिकार्डिंग होगी। उसकी मां वैसे कृष्णा को बाहर जाने की इजाज़त कभी न देती मगर जब भटसावे

ने कहा कि उसे और रूपये मिलेंगे तो उसने अपनी बेटी से कहा कि जल्दी जाओ और फ़ारिग़ होकर सीधी यहां आओ। वहां स्टूडियो में न बैठी रहना।

टैक्सी वर्ली पहुंची यानी साहिल समुन्द्र के पास। ये वो जगह थी जहां ऐशपरस्त किसी न किसी औरत को बग़ल दबाए आया करते। एक पहाड़ी सी थी, मालूम नहीं मसनूई या कुदरती-- उस पर चढ़ते-- काफी लम्बी-चौड़ी पहाड़ी क़िस्म की जगह थी।

उसमें लम्बे फास्लों पर बेंचें रखी हुई थीं। जिन पर सिर्फ़ एक-एक जोड़ा बैठता। सबके दर्मियान अनलिखा समझौता था कि वो एक दूसरे के मामले में दिक्कत न हो। भटसावे ने जो, अज़ीम की दावत करना चाहता था, वर्ली की पहाड़ी पर कृष्णा को उसके सुपुर्द कर दिया और खुद माला के साथ टहलता-टहलता एक ओर चला गया।

अज़ीम और भटसावे में डेढ़ सौ गज़ का फासला होगा। अज़ीम, जिसने ग़ैर औरत के दर्मियान हज़ारों मील का फासला महसूस किया था, जब कृष्णा को अपने साथ लगे देखा तो उसका ईमान मुतज़लज़ल हो गया। कृष्णा ठेठ मराठी लड़की थी। सांवली-सलोनी, बड़ी मजबूत, शदीद तौर पर जवान और उसमें वो तमाम दावतें थीं जो पुरकशिश खेलने वाली में हो सकती हैं। अज़ीम चूंकि नशे में था इसलिए वो अपनी बीवी को भूल गया और उसके दिल में ख़्वाहिश पैदा हुई कि कृष्णा को थोड़े अर्से के लिए बीवी बना ले।

उसके दिमाग़ में मुख़्तलिफ़ शरारतें पैदा हो रही थीं। कुछ रम के कारण और कुछ कृष्णा की कुर्बत के कारण। आम तौर पर वो बहुत संजीदा रहता था। बड़ा कम गो। लेकिन उस वक़्त उसने कृष्णा को गुदगुदी की। उसको कई लतीफे अपनी टूटी-फूटी गुजराती में सुनाए। फिर जाने उसे क्या ख़्याल आया कि ज़ोर से भटसावे को आवाज़ दी और कहा "पुलिस आ रही है, पुलिस आ रही है।"

भटसावे माला के साथ आया। अज़ीम को मोटी गाली दी और हंसने लगा वो समझ गया था कि अज़ीम ने उससे मज़ाक़ किया है। लेकिन उसने सोचा बेहतर यही है किसी होटल में चलें जहां पुलिस का ख़तरा न हो। चारों उठ रहे थे कि पीली पगड़ी वाला प्रकट हुआ। उसने ठेठ सिपाहियाना अंदाज़ में पूछा: "तुम लोग रात के गयारह बजे यहां क्या कर रहा है? मालूम नहीं, दस बजे के पीछो यहां बैठना ठीक नहीं है? कानून है!"

अज़ीम ने संतरी से कहा: ''जनाब अपुन फिल्म का आदमी है।

''ये छोकरी?'' उसने कृष्णा की तरफ देखा।

''ये भी फिल्म में काम करती है। हमलोग किसी बुरे ख़्याल से यहां नहीं आए। यहां पास ही जो स्टूडियो है, उसमें काम करते हैं। थक जाते हैं तो यहां चले आते हैं कि थोड़ी सी तफरीह होगी। बारह बजे हमारी शूटिंग फिर शुरू होने वाली है।''

पीली पगड़ी वाला संतुष्ट हो गया। फिर वो भटसावे से मुख़ातिब हुआ: ''तुम इधर क्यों बैठा है?'' भटसावे पहले घबराया लेकिन संभल कर उसने माला का हाथ अपने हाथ में लिया और संतरी से कहा: ''यह हमारा वाइफ है। हमारी टैक्सी नीचे खड़ी है।''

थोड़ी सी और गुफ्तुगू हुई और चारों की खुलासी हो गई। इसके बाद उन्होंने टैक्सी में बैठ कर सोचा कि किसी होटल में चलें। अज़ीम को ऐसे होटलों के बारे में कोई इल्म नहीं था जहां आदमी चन्द घंटों के लिए किसी ग़ैर औरत के साथ गुज़ार सके। भटसावे ने बेकार इससे मश्वरा किया। चुनांचि उसको फौरन डयुक यार्ड कासी देव होटल याद आया और उसने टैक्सी वाले से कहा कि वहां ले चलो। कासी देव होटल में भटसावे ने दो कमरे लिए। एक में अज़ीम और कृष्णा चले गए। दूसरे में भटसावे और मिस खांडेकर। कृष्णा बदस्तूर मुजस्समे-दावत थी। लेकिन अज़ीम जिसने दो पैग और पी लिए थे, फल्सफी रंग इख़्तियार कर चुका था। उसने कृष्णा को ग़ौर से देखा और सोचा कि इतनी कम उम्र लड़की ने गुनाह का यह भयानक रास्ता क्यों इख़्तियार किया। खून की कमी के बावजूद इसमें जिंस की इतनी तपिश क्यों है? कब तक यह नर्मो-नाजुक लड़की जो गोश्त नहीं खाती, कब तक अपना गोश्त-पोश्त बेचती रहेगी। अज़ीम को इस पर बड़ा तरस आया। चुनांचि उसने वाइज़ बन कर उस से कहना शुरू किया: ''कृष्णा! अपनी इस ज़िन्दगी से किनाराकश हो जाओ। खुदा के लिए उस रास्ते से जिस पर तुम चल रही हो, अपने क़दम हटालो।। यह तुम्हें ऐसी भयंकर गुफा में ले जाएगा जहां से तुम न निकल सकोगी। इस्मतफ़रोशी इंसान की बदतरीन फेल है। ये रात अपनी ज़िन्दगी की रौशन रात समझो। इसलिए कि मैं ने तुम्हें नेक और बद समझा दिया है।'' कृष्णा ने इसका जो मतलब समझा वो यह था कि अज़ीम उस से मुहब्बत कर रहा है। चुनांचि वो उसके साथ चिमट गई और अज़ीम अपना गुनाहो-सवाब का मसला भूल गया।

बाद में वो बड़ा नादिम हुआ। कमरे से बाहर निकला तो भटसावे बरामदे में टहल रहा था। कुछ इस अंदाज़ से जैसे भिड़ों के पूरे छत्ते के डंक उसके जिस्म में 'खुबे' हुए हैं। अज़ीम को देख कर वो रूक गया। मुतमइन कृष्णा की तरफ एक निगाह डाली और पेंचोताब खाकर अज़ीम से कहा: ''वो साली चली गई।''

अजीम जो अपनी नदामत में डूबा हुआ था, चौंका: ''कौन?''

''वही--माला।''

''क्यों?''

भटसावे के लहजे में अजीबो-ग़रीब विरोध था: ''हम उसको इतना वक़्त चूमते रहे। जब बोला आओ तो साली कहने लगा, तुम हमारा भाई है, हम ने किसी से शादी कर ली है। और बाहर निकल गई कि वो साला घर में आ गया होगा।

मिस्टर मोईनुद्दीन

मुंह से कभी जुदा न होने वाला सिगार ऐशट्रे में पड़ा हल्का-हल्का धुंआ दे रहा था। पास ही मिस्टर मोईनुद्दीन आराम कुर्सी पर बैठे एक हाथ अपने चौड़े माथे पर रखे कुछ सोच रहे थे। हालांकि वो इसके आदी नहीं थे। आमदनी माकूल थी। कराची शहर में उनकी मोटरों की दुकान सब से बड़ी थी। इसके इलावा सोसाइटी के ऊंचे हल्कों में उनका बड़ा नाम था। कई कलबों के मेम्बर थे। बड़ी-बड़ी पार्टियों में उनकी शिरकत ज़रूरी समझी जाती थी। साहबे औलाद थे। लड़का इंग्लिस्तान में पढ़ रहा था। लड़की बहुत कमसिन थी, लेकिन बड़ी ज़हीन और खूबसूरत। वो इस तरफ से भी बिल्कुल संतुष्ट थे। लेकिन अपनी बीवी। मगर उचित मालूम होता है कि पहले मिस्टर मोईनुद्दीन की शादी के सम्बंध में कुछ बातें बता दी जाएं।

मिस्टर मोईनुद्दीन के वालिद बम्बई में रेशम के बहुत बड़े व्यापारी थे। यों तो वो रहने वाले लाहौर के थे मगर कारोबारी सिलसिले के कारण बम्बई ही में रह गये थे, और यही उनका वतन बन गया था। मोईनुद्दीन जो उनका इक्लौता लड़का था, बज़ाहिर आशिक़ मिज़ाज नहीं था। लेकिन मालूम नहीं वो कैसे और क्योंकर आदम जी बाटली वाला की मोटी-मोटी ग़िलाफ़ी आंखों वाली लड़की पर फ़रेफ़ता हो गया। लड़की का नाम ज़ोहरा था, मोईनुद्दीन से मुहब्बत करती थी। मगर शादी में कई मुश्किलात हाइल थीं। आदम जी बाटली वाला जो मोईनुद्दीन के वालिद का पड़ोसी और दोस्त भी था, बड़े पुराने ख़्यालात का बोहरा था। वो अपनी लड़की की शादी अपने ही फिर्क़े में करना चाहता था। चुनांचि ज़ोहरा और मोईनुद्दीन का मुआशिका बहुत देर तक बेनतीजा चलता रहा। इस दौरान में मोईनुद्दीन के वालिद का

इंतक़ाल हो गया। मां पहले मर चुकी थी। अब कारोबार का सारा बोझ मोईनुद्दीन के कंधों पर आन पड़ा। जिससे उसको कोई रग़बत नहीं थी। इध र ज़ोहरा की मुहब्बत भी थी जो किसी भी तरह कामयाब होती नज़र नहीं आती थी। फिर हिन्दू-मुस्लिम फसादात थे। मोईनुद्दीन एक अजीब गड़बड़ में गिरफ्तार हो गया था। उसकी समझ में नहीं आता था कि क्या करे और क्या न करे।

बेसोचे समझे एक दिन उसने फैसला किया कि अपना कारोबार समेट कर उसको किसी अच्छे गाहक के पास बेच डाले। चुनांचि उसने ऐसी ही किया और अपना सारा रूपया कराची के बैंक में जमा करा दिया और ज़ोहरा से मिल कर उसने अपने इरादे का इज़्हार किया कि वो बम्बई छोड़ कर कराची जाना चाहता है। मगर अकेला नहीं, ज़ोहरा उसके साथ होगी। ज़ोहरा फौरन मान गई! एक हफ्ते के बाद दोनो मियां बीवी बन कर कराची के एक खूबसूरत होटल में थे। बम्बई में ज़ोहरा के वाल्दैन पर क्या गुज़री इसका उन्हें कुछ इल्म नहीं था और न उन्हें इसके सम्बंध कुछ जानकारी हासिल करने की इच्छा थी। दोनों अपनी मुहब्बत की प्यास बुझाने में मगन थे। उन को इस अहम हादसे की ख़बर नहीं थी कि हिन्दुस्तान दो हिस्सों में तक़सीम हो गया है।

बहर हाल जब लाखों इंसानों का ख़ून साम्प्रदायिक दंगे में पानी की तरह बह गया और कराची में पाकिस्तान क़याम की खुशी में चिराग़ां हुआ तो मिस्टर मुईन और मिसेज़ मुईन को मालूम हुआ कि वो पाकिस्तान में हैं। और मिस्टर आदम भाई बाटली वाला और मिसेज़ आदम भाई बाटली वाला हिन्दुस्तान में। वो बहुत खुश हुए कि अब वो सुरक्षित थे। जब अफरा-तफरी का आलम किसी क़दर कम हुआ तो मिस्टर मोईनुद्दीन ने अपने बम्बई के कारोबार के हवाले से एक बहुत बड़ी दुकान अपने नाम अलाट करा ली। और उसमें मोटरों का कारोबार शुरू कर दिया जो चन्द बरसों में चल निकला। इस दौरान में उनके यहां दो बच्चे पैदा हुए। एक लड़का और एक लड़की। लड़का जब चार बरस का हुआ तो उन्होंने उसको अपने एक दोस्त के हवाले कर दिया जो इंग्लिस्तान जा रहा था। मिस्टर मुईन चाहते थे कि उसकी तरबियत वहीं हो क्योंकि कराची की फ़िज़ा उनके नजदीक बड़ी गन्दी थी। लड़की जो अपने भाई से एक बरस छोटी थी, घर ही में खेलती कूदती रहती। इसके लिए मिस्टर मुईन ने एक अंग्रेज नर्स मुक़र्रर कर रखी थी। इस बात पर ज़्यादा ज़ोर देने की कोई ज़रूरत महसूस नहीं होती कि

मिस्टर मुईन को अपनी बीवी से बेपनाह मुहब्बत थी। वो कम बोलने वाले और शरीफ तबीयत थे। वो ज़ोहरा से जब अपनी मुहब्बत का इज़्हार करते तो बड़े मद्धिम सुरों में। बड़े वाज़ेदार क़िस्म के आदमी थे। कलबों में जाते, ज़ोंहरा उनके साथ होती मगर वो दूसरे मेम्बरों की तरह अकारण हंसी-क़हक़हों में कभी शामिल न होते। व्हिस्की के दो पैग आहिस्ता-आहिस्ता पीते जैसे कोई क़र्ज़ अदा कर रहे हैं। नाच शुरू होता तो ज़ोहरा के साथ थोड़ी देर नाच कर घर वापस चले आते जो उन्होंने एक हिन्दू से कराची आने के बाद खरीद लिया था।

ज़ोहरा कभी-कभी अपने पति की इजाज़त से दूसरों के साथ भी नाच लेती थी। इसमें मिस्टर मुईन कोई हर्ज नहीं समझते थे। मगर जब उन्होंने देखा कि ज़ोहरा उनके एक दोस्त मिस्टर अहसन से जो अधेड़ उम्र के बहुत बड़े मालदार और ताजिर थे, ज़रूरत से ज़्यादा ध्यान दे रही है तो उन को बड़ी उलझन हुई मगर उन्होंने ज़ोहरा पर इसका इज़्हार कभी न किया क्योंकि वो सोचते थे कि अहसन और ज़ोहरा में उम्र का इतना अन्तर है। फिर वो दो बच्चों की मां है। यह सिर्फ रक़ाबत का जज़्बा है जो उनकी अपनी मुहब्बत की पैदावार है। इसके अलावा एक और बात भी थी कि सोसाइटी के जिन ऊंचे हल्क़ों में उनका उठना बैठना था, उसमें बीवियों से ग़ैर मर्दों से बातें करने को बुरी नज़रों से नहीं देखा जाता था बल्कि उसे फैशन समझा जाता था कि एक बीवी किसी दूसरे आदमी के साथ नाचे और उसकी बीवी पहले के शौहर के साथ, ऐसी अदला-बदली आम थी।

पहले मिस्टर अहसन गाहे-गाहे, जब कोई पार्टी दी गई हो, मिस्टर मुईन के हां आया करते थे। मगर कुछ अर्से से उनका बाक़ायदा आना जाना शुरू हो गया था। उनकी ग़ैर हाज़री में भी वो आ जाते और घंटों ज़ोहरा के पास बैठे रहते। ये उन्हें अपने मुलाज़िमों से मालूम हुआ था। लेकिन इसके बावजूद उन्होंने ज़ोहरा से कुछ न कहा। दरअसल उनकी ज़बान पर ऐसे लफ़्ज़ आते ही नहीं थे जिन से वो शकूक का इज़्हार करे। वो मजबूर थे। इसलिए कि उनकी परवरिश ही ऐसे माहौल में हुई थी, जहां ऐसे मामलों में होंट खोलना बुरा समझा जाता है। रौशन ख़्याली का तक़ाज़ा यही था कि वो ख़ामोश रहें।

यों तो उन्होंने एक बड़े मार्के का इश्क़ किया था मागर दिमाग़ उनका ताजिराना था। दिल और दिमाग़ में कोई इतना बड़ा फासला तो नहीं होता मगर मोटरों का कारोबार करते-करते और दौलत के अंबार समेटते-समेटते

बहुत सा चांदी सोना इन दोनों के दर्मियान ढेर हो गया था। इसके अलावा झगड़े से उन्हें नफ़रत थी, वो ख़ामोश ज़िन्दगी बसर करने के क़ायल जिसमें कोई हंगामा न हो।

लड़की थी, वो अपनी अंग्रेज़ नर्स के साथ खेलती रहती थी। जब उनके दिल में उसका प्यार उभरता तो वो उसे अपने पास बुलाकर कुछ अर्से के लिए अपनी गोद में बिठाते और अंग्रेज़ी में प्यार कर के उसे फिर नर्स के हवाले कर देते। जब कारोबार से फ़ारिग़ हो कर घर आते तो ज़ोहरा के होंठों का बोसा लेते और डिनर खाने में मशगूल हो जाते। अगर मिस्टर अहसन उन से पहले वहां मौजूद होते तो वो उनको भी डिनर में शामिल कर लेते। ऐसे मौक़ों पर, ज़रूरत बे ज़रूरत, ज़ोहरा मिस्टर अहसन की ख़ातिरदारी करती। उनकी पलेट मुख़्तलिफ़ सालनों से भर देती और उनको बड़े मुहब्बत भरे अंदाज़ में मजबूर करती कि वो तकल्लुफ़ न करें। जब वो ज़ोहरा का यह नारो-इलतफात देखते तो उनके दिल और दिमाग के दर्मियान सोने चांदी के ढेर कुछ पिघल से जाते, और दोनों आपस में सरगोशियां करना शुरू कर देते।

मिस्टर अहसन रंडवे थे। उनकी कोई औलाद नहीं थी। कराची में मोतियों के सब से बड़े ताजिर थे। करोड़पती, हर साल मिस्टर मोईनुद्दीन से मोटरों के नए मॉडल ख़रीदते थे। ज़ोहरा की सालग्रह पर उन्होंने दो क़ीमती हार तोहफ़े के तौर पर दिए थे। जब मिस्टर मोईनुद्दीन ने इन्हें क़बूल करने से अपने मख़्सूस धीमे अंदाज़ में इंकार किया था तो मिस्टर अहसन ने कहा था। "मुझे सदमा होगा अगर यह हार मिसेज़ मुईन के गले की ज़ीनत न बने।" यह सुन कर ज़ोहरा ने दोनों हार उठा कर मिस्टर अहसन को दे दिए और उससे कहा: "लीजिये आप अपने हाथों से पहना दीजिये।"

जब हार ज़ोहरा के गले में पहना दिए गये तो बवजह मजबूरी मिस्टर मुईन को अपने दोस्त मिस्टर अहसन की हां में हां मिलाना पड़ी कि अरब सागर के पानियों में सीपों ने इन हारों के मोती ख़ास तौर पर ज़ोहरा ही के लिए पैदा किए थे।

एशट्रे में रखा हुआ सिगार आहिस्ता-आहिस्ता सुलग कर आधा के क़रीब जलकर और सफेद राख में तब्दील हो चुका था। पास ही आराम कुर्सी पर मिस्टर मुईन इसी तरह अपने चौड़े माथे पर एक हाथ रखे गहरी सोच में ग़र्क़ थे। वो इतना कभी परेशान होते मगर अब उनकी इज़्ज़त का सवाल दरपेश था। आज उन्होंने अपने कानों से ऐसा संवाद सुना था। ज़ाहिर

है कि ज़ोहरा और अहसन के दर्मियान जिसने सकून पसंद तबीयत को दरहम-बरहम कर दिया था।

चौड़े माथे पर हाथ रखे वो किसी गहरी सोच में डूबे थे। उनके कान बार-बार वो मुकालमा सुन रहे थे जो उनकी बीवी और उनके दोस्त के दर्मियान बड़े कमरे में हुआ था। दुकान में एक मोटर का सौदा करते-करते उनकी तबीयत अचानक नासाज़ हो गई; चुनांचि यह काम मनेजर के हवाले कर के वो घर रवाना हो गये ताकि आराम करें। क्रेप-सोल शू पहने हुए थे इसलिए कोई आहट न हुई। दरवाज़े के पास पहुंचे तो उन्हें ज़ोहरा की आवाज़ सुनाई दी:

"अहसन साहब! मैं आपको यक़ीन दिलाती हूं कि मैं उन से तलाक़ हासिल कर लूंगी।"

अहसन बोले: "मगर कैसे... क्योंकर?"

"मैं आप से कई बार कह चुकी हूं कि वो मेरी कोई बात नहीं टालेंगे।"

"ताज्जुब है।"

"इसमें ताज्जुब की क्या बात है। वो मुझ से बेपनाह मुहब्बत करते हैं। उन्होंने आज तक मेरी हर फरमाइश पूरी की है। मैं अगर उन से कहूं कि पांच मंज़िलों से नीचे कूद जाएं तो वो यक़ीनन कूद जाएंगे।"

"हैरत है।"

"आपकी हैरत दूर हो जाएगी जब मैं कल ही आपको तलाक़नामा दिखा दूंगी।"

ये मुकालमा सुन कर मिस्टर मुईन अपनी ख़राब तबीयत तबा को भूल गये और उल्टे पांव वापस दुकान पर चले गये। जहां अभी तक मोटर का सौदा तय हो रहा था। मगर उन्होंने उस से कोई दिलचस्पी न ली और अपने दफ्तर में चले गये। सिगार सुलगाया मगर एक कश लेने के बाद उसे एशट्रे में रख दिया और सर पकड़ कर आराम कुर्सी पर बैठ गये। ज़ाहिर है कि ज़ोहरा ने जो कुछ कहा, वो मिस्टर मुईन की ग़ैरत के नाम पर एक ज़बरदस्त चैलेंज था। उन्होंने अपने चौड़े माथे पर से हाथ उठाया और ऐशट्रे में सिगार को बुझाकर एक नया सिगार निकाला और उसे सुलगाया। आहिस्ता-आहिस्ता वो होंठों में उसे घुमाने लगे फिर एकदम उठे और दुकान से बाहर निकल कर मोटर में सवार हुए और घर का रुख़ किया।

उनके दोस्त मिस्टर अहसन जा चुके थे। ज़ोहरा अपने कमरे में सिंगार

मेज़ के पास बैठी मेकअप करने में मशगूल थी। जब उसने आईने में मुईन का अक्स देखा तो बिना मुड़े, होठों पर लिपिस्टिक ठीक करते हुए कहा: "आप आज जल्दी आ गये।"

"हां तबीयत ठीक नहीं।" सिर्फ इतना कहकर वो बड़े कमरे में जाकर सोफे पर लेट गये। सिगार उनके होंठों में बड़ी तेज़ी से घूमने लगा, थोड़ी देर के बाद बनी ठनी ज़ोहरा आई। मिस्टर मुईन ने उसकी तरफ देखा और दिल ही दिल में उसके हुस्न को सराहा। ये, वो कई बार अपने दिल में कर चुके थे।

लम्बा क़द, बहुत मुनासिब और उचित गदराया हुआ जिस्म, बड़ी-बड़ी गिलाफी आंखें, शरबती रंग की। उस से हर लिबास सजता था। बोहरी लिबास भी जिससे मुईन को सख़्त नफ़रत थी। जब ज़ोहरा पास आई और उसने एक अदा के साथ एक पति का मिज़ाज पूछा तो वो ख़ामोश रहे। जब वो उसके पास बैठ गई तो मुईन सोफे पर से उठे और मुंह से सिगार निकाल कर बड़ी संजीदगी के साथ अपनी बीवी से मुख़ातिब हुए। "ज़ोहरा! क्या तुम मुझ से तलाक़ लेना चाहती हो?" ज़ोहरा एक क्षण के लिए बौखला सी गई। मगर फौरन ही संभल कर उसने अपने पति से पूछा: "आपको कैसे मालूम हुआ?"

"मैने तुम्हारी और अहसन की गुफ्तुगू सुन ली थी।" मुईन की आवाज़ में दुख और गुस्सा का अंश तक न था। ज़ोहरा ख़ामोश रही। मुईन ने सिगार का एक कश लिया और कहा: "मैं तुम्हें तलाक़ नहीं दूंगा।"

ज़ोहरा उठ खड़ी हुई: "क्यों?"

मुईन ने कुछ सोचा: "मैं सोसाइटी में अपने नाम और अपनी इज़्ज़त पर आंच आता नहीं देख सकता।"

"लेकिन--- ज़ोहरा अटक गई। "लेकिन मैं उस से वायदा कर चुकी हूं।"

"तो कोई दूसरी राह तलाश करनी चाहिए। तलाक़ मैं कभी नहीं दूंगा। इसलिए कि मेरी इज़्ज़त का सवाल है। वैसे मुझे तुम्हारे वायदे का ख़्याल है।" यह कह कर उन्होंने सिगार ऐशट्रे में रख दिया। मियां बीवी थोड़ी देर तक ख़ामोश रहे। आख़िर ज़ोहरा चिंतित स्वर में बोली:

"लेकिन मैं तलाक़ लिए बग़ैर उस से शादी कैसे कर सकती हूं?"

"क्या तुम वाक़ई उस से शादी करना चाहती हो?" ज़ोहरा ने हां में सर हिलाया वो मुईन ने उससे सवाल किया: "क्यों?"

ज़ोहरा ख़ामोश रही। मुईन ने एक सवाल किया: "क्या इस लिए कि तुम्हारे दिल में अब मेरी मुहब्बत नहीं है?"

"मेरी दिल में आपकी मुहब्बत वैसी की वैसी मौजूद है, और इसके लिए मैं खुदा की क़सम खाने को तैयार हूं। लेकिन मालूम नहीं क्यों मेरा जी चाहता है कि अहसन के साथ रहूं।" यह कह कर ज़ोहरा सोफे पर बैठ गई। मुईन ने अपने मुंह से सिगार निकाला और कहा: तुम उसके साथ रह सकती हो।"

ज़ोहरा चौंक कर उठ खड़ी हुई।

"मगर एक शर्त पर।" मुईन ने सिगार ऐशट्रे में बुझाते हुए कहा: "तुम मेरे पास भी रहा करोगी। ताकि लोगों को किसी क़िस्म का शक न हो। उनको ऐसी बातें बनाने का मौक़ा न मिले कि मुईन चूंकि अपनी बीवी की फरमाइशें पूरी न कर सका, उसने तलाक़ लेकर एक करोड़पती से शादी कर ली, या यह कि मुईन की बीवी बदकिर्दार थी। इसलिए उसने तलाक दे दी।"

"बदकिर्दार तो मैं हूं।" ज़ोहरा ने अपनी मोटी-मोटी ग़िलाफी आंखें एक क्षण के लिए झुका लीं। मुईन ने उसे दिलासा दिया। "इसका सबूत सिर्फ मेरा मानना है जो मेरी ज़बान पर कभी नहीं आएगा। इसलिए कि यह मेरी अपनी इज़्ज़त और मेरे नामों पर उंगली उठने का कारण होगा-- इसके अलावा मुझे तुम से मुहब्बत है।" यह कह कर मुईन को ऐसा महसूस हुआ कि उसके सीने का सारा बोझ उतर गया।

ज़ोहरा ने अहसन को सारी बात बता दी। वो राज़ी हो गया। इसलिए ज़ोहरा उसके पास कई-कई दिन रहने लगी। अहसन ज़ोहरा के शारीरिक सम्बंध और उसके पती के बलिदान से इतना प्रभावित हुआ कि उसने थोड़े ही समय के बाद वसीयत लिख कर अपनी सारी जायदाद की वारिस ज़ोहरा को बना दिया।

ज़ोहरा ने इस बात को अपने पति से न बताया। उसके दिल को ठेस लगती। वो अपनी लड़की को देखने और मुईन से मिलने के लिए अक्सर आती और कभी कुछ रातें भी वहीं गुजारती। पती-पत्नी की यह नई ज़िन्दगी ठीक से गुज़रती रही कि अचानक एक दिन मिस्टर अहसन दिल की धड़कन बन्द हो जाने के कारण इंतक़ाल कर गये। नमाज़ जनाज़ा में सोसाइटी की ऊंची-ऊंची हस्तियों की पंक्ति में मिस्टर मुईन भी शरीक थे। उन्होंने अपने मरहूम दोस्त की 'मग़फ़रत' के लिए सच्चे दिल से दुआ की

और घर आकर उचित शब्दों में ज़ोहरा को दिलासा दिया।

ज़ोहरा की आंखों से आंसू बह रहे थे और वो गिन-गिन कर अहसन की ख़ूबियां बयान कर रही थी। आख़िर में उसने अपने पति को बताया कि वो अपनी सारी जायदाद उसके नाम कर गया है। यह सुनकर मिस्टर मुईन ख़मोश रहे और ज़ोहरा से इस बारे में कोई बात नहीं की।

अदालत से जब ज़ोहरा को मरहूम अहसन की सारी जायदाद का कब्ज़ा मिल गया और वो खुश-खुश घर आई तो देखा कि एक मौल्वी क़िस्म का आदमी सोफे पर बैठा हुआ है। हाथ में उसके एक काग़ज़ है। उसको एक नज़र देख कर वो अपने पति से बोली:

''क़ब्ज़ा मिल गया है।''

मिस्टर मुईन ने कहा: ''बहुत खुशी की बात है।'' फिर उन्होंने मौलवी साहब के हाथ से काग़ज़ लिया और ज़ोहरा की तरफ बढ़ा दिया: ''यह लो।''

ज़ोहरा ने काग़ज़ लेकर पूछा: ''यह क्या है?''

मिस्टर मुईन ने शांत स्वर में जवाब दिया: ''तलाक़ नामा।''

''ज़ोहरा के मुंह से हलकी सी चीख़ निकली: ''तलाक़ नामा।''

''हां'' यह कह कर मुईन ने जेब में हाथ डाला और एक चेक निकाला: ''ये तुम्हारा हक़े मेहर है-- बीस हज़ार रूपये।''

ज़ोहरा और ज़्यादा भौंचक्की रह गई: ''मगर-- यह सब क्या है?''

''ये सब यह है कि मुझे अपनी इज़्ज़त और अपना नामूस बहुत प्यारा है। जब मेरी जान पहचान वाले इलाक़ों को यह मालूम होगा कि अहसन तुम्हारे लिए सारी जायदाद छोड़ मरा है तो क्या-क्या कहानियां घड़ी जाएंगी।''

यह कह कर वो मौलवी से मुख़ातिब हुआ:

''आइये क़ाज़ी साहब!''

क़ाज़ी उठा। जाते हुए मिस्टर मुईन ने पलट कर अपनी 'मुतलक़ा' बीवी की तरफ देखा और कहा:

'यह बिल्डिंग भी तुम्हारी है। रजिस्ट्री के काग़ज़ात तुम्हें पहुंच जाएंगे-- ''और तुमने इजाज़त दी तो मैं कभी-कभी तुम्हारे पास आया करूंगा।''

फुंदने

कोठी से लगे बड़े बाग़ में झाड़ियों के पीछे एक बिल्ली ने बच्चे दिए थे जो बिल्ला खा गया था। फिर एक कुतिया ने बच्चे दिए थे जो बड़े-बड़े हो गए थे और दिन रात कोठी के अन्दर बाहर भौंकते और गंदगी बिखेरते रहते थे। उनको ज़हर दे दिया गया-- एक-एक करके सब मर गए थे। उनकी मां भी-- उनका बाप मालूम नहीं कहां था। वो होता तो उसकी मौत भी यक़ीनी थी।

जाने कितने बरस गुज़र चुके थे-- कोठी से लगे बाग़ की झाड़ियां सैकड़ों-हजारों बार काटी-छाटी जा चुकी थीं। कई बिल्लियों और कुतियों ने इनके पीछे बच्चे दिए थे जिनका नामो-निशान भी न रहा था। उसकी अक्सर 'बद आदत' मुर्ग़ियां वहां अंडे दे दिया करती थीं जिनको हर सुबह उठा कर के अन्दर ले जाती थी।

उसी बाग़ में किसी आदमी ने उनकी नौजवान मुलाज़िमा को बड़ी बेदर्दी से क़त्ल कर दिया था-- उसके गले में उसका फुंदनों वाला सुर्ख़ रेश्मी अज़ारबन्द जो उसने दो दिन पहले फेरी वाले से आठ आने में ख़रीदा था, फंसा हुआ था। इस ज़ोर से क़ातिल ने पेच दिए थे कि उसकी आंखें बाहर निकल आई थीं।

इसको देख कर उसको इतना तेज़ बुख़ार चढ़ा था कि बेहोश हो गई थी-- और शायद अभी तक बेहोश थी। लेकिन नहीं, ऐसा क्योंकर हो सकता था, इसलिए कि इस क़त्ल के देर बाद मुर्ग़ियों ने अंडे, नहीं बिल्लियों ने बच्चे दिए थे और एक शादी हुई थी-- कुतिया थी जिसके गले में लाल दुपट्टा था। 'मकेशी'-- झिलमिल-झिलमिल करता। उसकी आंखें

बाहर निकली हुई नहीं थीं, अन्दर धंसी हुई थीं।

बाग़ में बैंड बजा था-- सुर्ख वर्दियों वाले सिपाही आए थे जो रंग-बिरंगी मश्कें बग़लों में दबा कर मुंह से अजीब-अजीब आवाज़ें निकालते थे। उनकी वर्दियों के साथ कई फुंदने लगे थे। जिन्हें उठा-उठा कर लोग अपने अज़ारबन्दों में लगाते जाते थे-- पर जब सुबह हुई थी तो इनका नामोनिशान तक नहीं था-- सबको ज़हर दे दिया गया था।

दुल्हन को जाने क्या सूझी, कमबख़्त ने झाड़ियों के पीछे नहीं, अपने बिस्तर पर सिर्फ एक बच्चा दिया। जो बड़ा गुलगोथना, लाल फुंदना था। उसकी मां मर गई। बाप भी। दोनों को बच्चे ने मारा। उसका बाप मालूम नहीं कहां था। वो होता तो उसकी मौत भी इन दोनों के साथ होती। सुर्ख़ वर्दियों वाले सिपाही बड़े-बड़े फुंदने लटकाए जाने कहां ग़ायब हुए कि फिर न आए। बाग़ में बिल्ले घूमते थे जो उसे घूरते थे। उसको छिछड़ों की भरी हुई टोकरी समझते थे। हालांकि टोकरी में नारंगियां थीं।

एक दिन उसने अपनी दो नारंगियां निकाल कर आईने के सामने रख दीं। उसके पीछे होके उसने उनको देखा मगर नज़र न आईं। उसने सोचा इसका कारण यह है कि छोटी हैं-- मगर वो उसके सोचते-सोचते ही बड़ी हो गईं और उसने रेशमी कपड़े में लपेट कर आतिशदान पर रख दीं।

अब कुत्ते भौंकने लगे-- नारंगियां फ़र्श पर लुढ़कने लगीं। कोटे के हर फर्श पर उछलीं, हर कमरे में कूदीं और उछलती कूदती बड़े-बड़े बाग़ों में भागने दौड़ने लगीं-- कुत्ते उन से खेलते और आपस में लड़ते-झगड़ते रहते।

जाने क्या हुआ, उन कुत्तों में दो ज़हर खा के मर गए। जो बाक़ी बचे वो उनकी अधेड़ उम्र की हट्टी-कट्टी मुलाज़िमा खा गई। यह उस नौजवान मुलाज़िमा की जगह आई थी जिसके किसी आदमी ने क़त्ल कर दिया था, गले में उसके फुंदनों वाले अज़ारबन्द का फन्दा डाल कर।

उसकी मां थी। अधेड़ उम्र की मुलाज़िमा से उम्र में छः सात बरस बड़ी। उसकी तरह हट्टी-कट्टी नहीं थीं। हर रोज़ सुबह-शाम मोटर में सैर को जाती थी। और बद आदत मुर्गियों की तरह दूर दराज़ बाग़ों में झाड़ियों के पीछे अंडे देती थी। उनको वो खुद उठा कर लाती थी न ड्राइवर।

आमलेट बनाती थी जिसके दाग़ कपड़ों पर पड़ जाते थे। सूख जाते तो उनको बाग़ में झाड़ियों के पीछे फेंक देती थी जहां से चीलें उठाकर ले जाती थीं।

एक दिन उसकी सहेली आई-- पाकिस्तान मेल, मोटर नम्बर 9612 पी.एल. बड़ी गर्मी थी। डैडी पहाड़ पर थे। मम्मी सैर करने गई हुई थीं। पसीने छूट रहे थे। उसके दूध उबले हुए थे जो आहिस्ता-आहिस्ता ठंडे हो गए। आख़िर दोनों दूध हिल-हिल के कंगने हो गए और खट्टी लस्सी बन गए।

उस सहेली का बैंड बज गया। मगर वो वर्दी वाले सिपाही फुंदने नचाने न आए। उनकी जगह पीतल के बरतन थे, छोटे और बड़े, जिनसे आवाज़ें निकलती थीं। गरजदार और धीमी-धीमी और गरज़दार।

यह सहेली जब फिर मिली तो उसने बताया कि वो बदल गई है। सचमुच बदल गई थी। उसके अब दो पेट थे। एक पुराना, दूसरा नया। एक के ऊपर दूसरा चढ़ा हुआ था। उसके दूध फटे हुए थे।

फिर उसके भाई का बैंड बजा। अधेड़ उम्र की हट्टी-कट्टी मुलाज़िमा बहुत रोई। उसके भाई ने उसको बहुत दिलासा दिया। बेचारी को अपनी शादी याद आ गई थी।

रात भर उसके भाई और उसकी दुल्हन की लड़ाई होती रही। वो रोती रही, वो हंसता रहा। सुबह हुई तो अधेड़ उम्र की हट्टी-कट्टी मुलाज़िमा उसके भाई को दिलासा देने के लिए अपने साथ ले गई। दुल्हन को नहलाया गया। उसकी शलवार में लाल फुंदनों वाला अज़ारबन्द पड़ा था। मालूम नहीं यह दुल्हन के गले में क्यों न बांधा गया।

उसकी आंखें बहुत मोटी थीं। अगर गला ज़ोर से घोंटा जाता तो वो ज़िबह किए हुए बकरे के आंखों की तरह बाहर निकल आतीं। और उसको बहुत तेज़ बुख़ार चढ़ता। मगर पहला तो अभी तक उतरा नहीं... हो सकता है उतर गया हो और यह नया बुख़ार हो जिसमें वो अभी तक बेहोश है।

उसकी मां मोटर ड्राइवरी सीख रही है। बाप होटल में रहता है। कभी-कभी आता है और अपने लड़के से मिल कर चला जाता है। लड़का कभी-कभी अपनी बीवी को घर बुला लेता है। अधेड़ उम्र की हट्टी-कट्टी मुलाज़िमा को दो तीन दिन के बाद कोई याद सताती है तो रोना शुरू कर देती है। वो उसे दिलासा देता है। वो उसे पुचकारती है और दुल्हन चली जाती है।

अब वो और दुल्हन भाभी, दोनों सैर को जाती हैं। सहेली भी पाकिस्तान मेल। मोटर नम्बर 9612 पी एल। सैर करते-करते अजंता जा निकलती हैं जहां तस्वीरें बनाने का काम सिखाया जाता है। तस्वीरें देख कर

तीनों तस्वीर बन जाती हैं। रंग ही रंग, लाल, पीले, हरे, नीले। सब के सब चीख़ने वाले हैं। उनको इन रंगों का बनाने वाला चुप कराता है। उसके लम्बे-लम्बे बाल हैं। सर्दियों और गर्मियों में ओवर कोट पहनता है। अच्छी शक्लो-सूरत का है। अन्दर बाहर हमेशा खड़ाऊं इस्तेमाल करता है। अपने रंगों को चुप कराने के बाद ख़ुद चीखना शुरू कर देता है। उसको ये तीनों चुप कराती हैं और बाद में ख़ुद चिल्लाने लगती हैं।

तीनों अजंता में ऐब्सट्रेक्ट आर्ट के सैंकड़ों नमूने बनाती रही। एक ही हर तस्वीर में औरत के दो पेट होते हैं। मुख़्तलिफ रंगों के। दूसरी की तस्वीरों में औरत अधेड़ उम्र की होती है। हट्टी-कट्टी, तीसरी की तस्वीरों में फुंदने की फुंदने। अज़ारबन्दों का गुच्छा।

ऐब्सट्रेक्ट तस्वीरें बनती रहीं। मगर तीनों के दूध सूखते रहे। बड़ी गर्मी थी, इतनी कि तीनों पसीने में शराबोर थीं। ख़स लगे कमरे के अन्दर दाख़िल होते ही उन्होंने अपने ब्लाउज़ उतारे और पंखे के नीचे खड़ी हो गईं। पंखा चलता रहा। दूधों में ठण्डक पैदा हुई न गर्मी।

उसकी ममी दूसरे कमरे में थीं। ड्राइवर उसके बदन से मोबिल आइल पोंछ रहा था।

डैडी होटल में था। जहां उसकी लेडी स्टेनोग्रफर उसके माथे पर यू डी क्लोन मल रही थी।

एक दिन उसका भी बैंड बज गया। उजाड़ बाग़ फिर बारौनक़ हो गया। गमलों और दरवाज़ों की आराइश अजंता स्टूडियो के मालिक ने की थी। बड़ी-बड़ी गहरी लिपिस्टिक उसके बिखेरे हुए रंग देख कर उड़ गईं। एक जो ज़्यादा सयाही माइल थी, इतनी उड़ी कि वहीं गिर कर उसकी शार्गिद हो गई।

उसके सुहागरात के लिबास का डिज़ाइन भी उसने तैयार किया था। उसने उसकी हज़ारों सिमतें पैदा कर दी थीं। ठीक सामने से देखो तो वो मुख़्तलिफ रंग के अज़ारबन्दों का बंडल मालूम हुई थीं। ज़रा उधर हट जाओ तो फलों की टोकरी थी। एक तरफ हो जाओ तो खिड़की पर पड़ा हुआ फुलकारी का पर्दा। पीछे चले जाओ तो कुचले हुए तरबूज़ों का ढेर। ज़रा दृष्टिकोण बदल कर देखो तो टमाटो सॉस से भरा हुआ मर्तबान। ऊपर से देखो तो यगाना आर्ट। नीचे से देखो तो मीरा जी की धुंधली शायरी।

फ़न शनास निगाहें अश-अश कर उठीं। दूल्हा इतना प्रभावित हुआ था कि शादी के दूसरे रोज़ ही उसने तहैया कर लिया कि वो भी एक आर्टिस्ट

बन जाएगा। चुनांचि अपनी बीवी के साथ वो अजंता गया जहां उन्हें मालूम हुआ कि उसकी शादी हो रही है और वो चन्द रोज़ से अपनी होने वाली दुल्हन ही के हां रहता है।

उसकी होने वाली दुल्हन वही गहरे रंग की लिपिस्टिक थी जो दूसरे लिपिस्टिकों के मुक़ाबले में ज़्यादा काली लिए हुए थी। शुरू-शुरू में चन्द महीने तक उसके शौहर को उससे और मुजर्रद आर्ट से दिलचस्पी रही, लेकिन जब अजंता स्टूडियो बन्द हो गया और उसके मालिक की कहीं से भी सुन-गुन न मिली तो उसने नमक का कारोबार शुरू कर दिया। जो बहुत नफ़ा बख़्श था।

इस कारोबार के दौरान में उसकी मुलाक़ात एक लड़की से हुई। जिसके दूध सूखे हुए नहीं थे। ये उसको पसंद आ गये। बैंड न बजा लेकिन शादी हो गई। पहले अपनी ब्रूश उठा कर ले गई और अलग रहने लगी।

ये मनमुटाव पहले तो दोनों के कड़वाहट का कारण हुआ लेकिन बाद में एक अजीबो-ग़रीब मिठास में तब्दील हो गई। उसकी सहेली ने जो दूसरा शौहर तब्दील करने के बाद सारे युरोप का चक्कर लगा आई थी और अब टी.वी. की मरीज़ थी। इस मिठास को क्यूबक आर्ट में पेंट किया। साफ-सुथरे चीनी के बेशुमार क्युब थे। जो थूहर के पौदों के दर्मियान इस अंदाज़ से ऊपर तले रखे थे कि इन से दो शकलें बन गई थी। इस पर शहर की मक्खियां बैठी रस चूस रही थीं।

उसकी दूसरी सहेली ने ज़हर खाकर खुदकुशी कर ली। जब उसको इसकी ख़बर मिली तो वो बेहोश हो गई। मालूम नहीं बेहोशी नहीं थी या वही पुरानी जो बड़े तेज़ बुख़ार के बाद ज़हूर में आई थी।

उसका बाप यू डी क्लोन में था। जहां उसका होटल उसकी लेडी स्टेनोग्राफर का सर सहलाता था।

उसकी मम्मी ने घर का सारा हिसाब किताब अधेड़ उम्र की हट्टी-कट्टी मुलाज़िमा के हवाले कर दिया था। अब उसको ड्राइविंग आ गई थी मगर बहुत बीमार हो गई थी मगर फिर भी उसको ड्राइवर के बिन मां के पल्ले का बहुत ख़्याल था। वो उसको अपना मोबिल आइल पिलाती थी।

उसकी भाभी और भाई की ज़िन्दगी बहुत अधेड़ और हट्टी-कट्टी हो गई थी। दोनों आपस में बड़े प्यार से मिलते थे कि अचानक एक रात जबकि मुलाज़िमा और उसका भाई घर का हिसाब किताब कर रहे थे, उसकी भाभी आई वो मुजर्रद थी। उसके हाथ में क़लम था न ब्रुश। लेकिन

उसने दोनों का हिसाब साफ कर दिया।

सुबह कमरे में से जमे हुए लहू के दो बड़े-बड़े फुंदने निकले जो उसकी भाभी के गले में लगा दिए गये।

अब वो कुछ होश में आई। पति से झगड़े के कारण उसकी ज़िन्दगी तल्ख़ होकर बाद में अजीबो-ग़रीब मिठास में तब्दील हो गई थी। उसने इसको थोड़ा सा तल्ख़ बनाने की कोशिश की और शराब पीना शुरू की, मगर नाकाम रही। इसलिए कि मिक़दार कम थी। उसने मिक़दार बढ़ा दी। यहां तक कि वो उसमें डुबकियां लेने लगी। लोग समझते थे कि अब ग़र्क़ हुई और अब ग़र्क हुई मगर वो सतह पर उभर आती थी। मुंह से शराब पोंछती हुई और कहक़हे लगाती हुई।

सुबह को जब उठती तो उसे महसूस होता कि रात भर उसके जिस्म का ज़र्रा-ज़र्रा दहाड़ें मार-मार कर रोता रहा है। उसके वो सब बच्चे पैदा हो सकते थे, इन क़बरों में जो उनके लिए बन सकती थीं। उस दूध के लिए जो उनका हो सकता था बिलक-बिलक कर रो रहे हैं। मगर उसके दूध कहां थे। वो तो जंगली बिल्ले पी चुके थे।

वो और ज़्यादा दुख़ के अथाह समुन्द्र में डूब जाए मगर उसकी ख़्वाहिश पूरी नहीं होती थी। ज़हीन थी। पढ़ी लिखी थी। सेक्स के बिषय पर बिना किसी बनावट के बेतकल्लुफ गुफ्तुगू करती थी। मर्दों के साथ जिस्मानी रिश्ता क़ायम करने में कोई बुराई नहीं समझती थी। मगर फिर भी कभी-कभी रात की तन्हाई में उसका जी चाहता था कि अपनी किसी बद आदत मुर्ग़ी की तरह झाड़ियों के पीछे जाए और एक अंडा दे आए।

बिल्कुल खोखली हो गई। सिर्फ हड्डियों का ढांचा बाक़ी रह गया तो उससे लोग दूर रहने लगे। वो समझ गई; चुनांचि वो उनके पीछे न भागी और अकेली घर में रहने लगी। सिगरेट पर सिगरेट फूंकती, शराब पीती और जाने क्या-क्या सोचती रहती। रात को बहुत कम सोती थी। कोठी के इर्द गिर्द घूमती रहती थी। सामने क्वार्टर में ड्राइवर का बिन मां का बच्चा मोबिल आयल के लिए रोता रहता था। मगर उसकी मां के पास ख़त्म हो गया था। ड्राइवर ने एक्सीडेंट कर दिया था। मोटर ग़ैराज में और उसकी मां अस्पताल में पड़ी थी। जहां उसकी एक टांग काटी जा चुकी थी, दूसरी काटी जाने वाली थी।

वो कभी-कभी क्वार्टर के अन्दर झांक कर देखती तो उसको महसूस होता कि उसके दूध की तलछट में हल्की सी लर्ज़िश पैदा हुई है। मगर उस

बे-स्वाद से उसके बच्चे के होंठ भी तर न होते।

उसके भाई ने कुछ अर्से से बाहर रहना शुरू कर दिया था। आख़िर एक दिन उसका ख़त स्वीट्ज़रलैण्ड से आया कि वो वहां अपना इलाज करा रहा है। नर्स बहुत अच्छी है। अस्पताल से निकलते ही वो उस से शादी करने वाला है।

अधेड़ उम्र की हट्टी-कट्टी मुलाज़िमा ने थोड़ा ज़ेवर, कुछ नक़दी और बहुत से कपड़े जो उसकी मम्मी के थे, चुराये और चन्द रोज़ के बाद ग़ायब हो गई। इसके बाद उसकी मां ऑपरेशन नाकाम होने के कारण अस्पताल में मर गई।

उसका बाप जनाज़े में शामिल हुआ। इसके बाद उसने उसकी सूरत न देखी।

अब वो बिल्कुल तन्हा थी। जितने नौकर थे, उसने अलग कर दिए ड्राइवर सहित। उसके बच्चे के लिए उसने एक आया रख दी। कोई बोझ सिवाये उसके ख़्यालों के बाक़ी न रहा था। कभी कभार अगर कोई उससे मिलने आता तो वो अन्दर से चिल्ला उठती थी, "चले जाओ-- जो कोई भी तुम हो, चले जाओ-- मैं किसी से मिलना नहीं चाहती।"

सैफ़ में उसको अपनी मां के बेशुमार क़ीमती ज़ेवरात मिले थे। उसके अपने भी थे जिन से उनको कोई रग़बत न थी। मगर अब वो रात को घंटों आईने के सामने नंगी बैठ कर ये तमाम ज़ेवर अपने बदन पर सजाती और शराब पी कर कनसुरी आवाज़ में फ़हश गाने गाती थी। आस पास कोई कोठी नहीं थी। इएलिए उसे मुकम्मल आज़ादी थी।

अपने जिस्म को तो वो कई तरीक़ों से नंगा कर चुकी थी। अब वो चाहती थी कि अपनी रूह को भी नंगा कर दे। मगर इसमें वो ज़बरदस्त हिजाब महसूस करती थी। इस हिजाब को दबाने के लिए सिर्फ एक ही तरीक़ा उसकी समझ में आया था कि पिये और खूब पिए। और इस हालत में अपने नंगे बदन से मदद ले। मगर यह एक बहुत बड़ी घटना थी कि वो आख़िरी हद तक नंगी होकर 'सतरपोश' हो गया था।

तस्वीरें बना-बना कर वो थक चुकी थी। एक अर्से से उसका पेंटिग का सामान संदूक़चे में बन्द पड़ा था। लेकिन एक दिन उसने सब रंग निकाले और बड़े-बड़े प्यालों में रखे। तमाम ब्रुश धो धाकर एक तरफ रखे और आईने के सामने नंगी खड़ी हो गई और अपने जिस्म पर नए ख़दोख़ाल बनाने शुरू किए। उसकी यह कोशिश अपने वजूद को पूरे तौर पर नंगा

करने की थी, वो अपना सामने का हिस्सा ही पेंट कर सकती थी। दिन भर वो इसमें मसरूफ़ रही। बिन खाए-पिए, आईने के सामने खड़ी अपने बदन पर मुख़्तलिफ रंग जमाती और टेढ़ी-बंगी लकीरें बनाती रही। उसके ब्रुश में एतिमाद था-- आधी रात के क़रीब उसने दूर हटकर अपना ध्यान से जाइज़ा लेकर इत्मीनान की सांस लिया। इसके बाद उसने तमाम ज़ेवरात एक-एक कर के अपने रंगों से लिथड़े हुए जिस्म पर सजाए और आईने में एक बार फिर ग़ौर से देखा कि एक दम आहट हुई।

उसने पलट कर देखा-- एक आदमी छुरा हाथ में लिए, मुंह पर ढाटा बांधे खड़ा था। जैसे हमला करना चाहता है। मगर जब वो मुड़ी तो हमलावर के कंठ से चीख़ निकली, छुरा उसके हाथ से गिर पड़ा। अफ़रातफ़री के आलम में कभी इधर का रूख़ किया कभी उधर का। आख़िर जो रास्ता मिला उसमें से भाग निकला।

वो उसके पीछे भागी। चीखती, पुकारती: ठहरो--ठहरो मैं तुम से कुछ नहीं कहूंगी-- ठहरो।''

मगर चोर ने उसकी एक न सुनी और दीवार फांद कर ग़ायब हो गया। मायूस होकर वापस आई। दरवाज़े की दहलीज़ के पास चोर का खंजर पड़ा था। उसने उसे उठा लिया और अन्दर चली गई-- अचानक उसकी नज़रें आईने से दोचार हुईं। जहां उसका दिल था, वहां उसने म्यान नुमा चमड़े के रंग का ख़ोल सा बना हुआ था। उसने उस पर खंजर रख कर देखा। ख़ोल बहुत छोटा था। उसने खंजर फेंक दिया और बोतल में से शराब के चार पांच बड़े-बड़े घूंट पीकर इधर-उधर टहलने लगी। वो कई बोतलें ख़ाली कर चुकी थी। खाया कुछ भी नहीं था।

देर तक टहलने के बाद वो फिर आईने के सामने आई। उसके गले में अज़ारबन्द नुमा ग्लूबन्द था जिसके बड़े-बड़े फुंदने थे। ये उसने ब्रश से बनाया था।

अचानक उसको ऐसा महसूस हुआ कि यह गलूबन्द तंग होने लगा है। आहिस्ता-आहिस्ता वो उसके गले के अन्दर धंसता जा रहा है। वो ख़ामोश खड़े आईने में आंखें गाड़े रही जो उसी रफ्तार से बाहर निकल रही थीं। थोड़ी देर के बाद उसके चेहरे की तमाम रगें फूलने लगीं। फिर एकदम से उसने चीख़ मारी और औंधे मुंह फर्श पर गिर पड़ी।

मंटो पर बातें करते हुए अचानक देवेन्द्र सत्यार्थी की याद आ जाती है। मंटो का मूल्यांकन करना हो तो मंटो और मंटो पर लिखे गये, दुनियाभर के लेख एक तरफ मगर सत्यार्थी मंटो पर जो दो सतरें लिख गये, उसकी नज़ीर मिलनी मुश्किल है। 'मंटो मरने के बाद ख़ुदा के दरबार में पहुंचा तो बोला, तुमने मुझे क्या दिया... बयालिस साल। कुछ महीने, कुछ दिन। मैने तो सौगंधी को सदियां दी हैं। 'सौगंधी' मंटो की मशहूर कहानी है। लेकिन एक सौगंधी ही क्या मंटो की कहानियां पढ़िये तो जैसे हर कहानी 'सौगंधी' और उससे आगे की कहानी लगती है।

तरफ़ आलम ज़ौक़ी

जन्म : मार्च 1962 आरा (भोजपुर) में।

सम्मान एवं पुरस्कार: कृश्नचन्दर पुरस्कार, कथा-आजकल सम्मान, दिल्ली उर्दू अकादमी का इलेक्ट्रोनिक मीडिया सम्मान, जामिया अलीगढ़ का मिल्लीनियम सम्मान और सरसैय्यद सम्मान तथा अंतर्राष्ट्रीय मानवाधिकार पुरस्कार 2007।

डी-304, ताज इन्कलेव लिंक रोड,

गीता कालोनी, दिल्ली, 110031

flipkart.com